कामन्दकीय नीतिसार – अष्टम सर्गः – मण्डलयोनिप्रकरणम्
(kamandakiya nitisara chapter-8 : Maṇḍalayoniprakaraṇam)



मूल ग्रंथकार (*Original Author*) : आचार्य कामन्दक (*Ācārya Kāmandaka*)

व्याख्या एवं प्रस्तुति (*Commentary & Presentation*) : *Indian Philosophy & Ethics*

लेखक / संपादक (*Author / Editor*) : *Anand Singh Dhami*

विषय क्षेत्र (*Subject Area*) : प्राचीन भारतीय राज्यशास्त्र, मण्डल सिद्धान्त, कूटनीति, राजनय, राजनीतिक दर्शन एवं भारतीय नीतिशास्त्र।

संक्षिप्त परिचय : प्रस्तुत लेख कामन्दकीय नीतिसार के अष्टम सर्ग **"मण्डलयोनिप्रकरणम्"** का विस्तृत, क्रमबद्ध एवं शोधपरक विवेचन प्रस्तुत करता है। इसमें प्रत्येक श्लोक का मूल पाठ, IAST लिप्यंतरण, शब्दार्थ, भावार्थ, दार्शनिक विश्लेषण तथा आधुनिक संदर्भों सहित व्याख्या दी गई है। लेख में मण्डल सिद्धान्त, सप्तप्रकृति सिद्धान्त, विजिगीषु के गुण, शत्रु-लक्षण तथा प्राचीन भारतीय कूटनीति के सिद्धान्तों को समकालीन अंतरराष्ट्रीय संबंधों, नेतृत्व एवं शासन-व्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में स्पष्ट किया गया है। यह लेख भारतीय राजनीतिक चिन्तन, संस्कृत साहित्य, दर्शन एवं नीतिशास्त्र के विद्यार्थियों, अध्येताओं तथा शोधार्थियों के लिए अत्यन्त उपयोगी एवं संदर्भग्राह्य अध्ययन सामग्री है।

ऑनलाइन लेख: *https://indianphilosophyethics.blogspot.com/2026/07/kamandakiya-nitisara-sarga-7-royal-security.html*

प्रस्तावना

भारतीय ज्ञान-परम्परा में नीतिशास्त्र का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। वैदिक काल से लेकर उत्तरवर्ती शास्त्रीय युग तक भारतीय मनीषियों ने राज्य, शासन, कूटनीति, प्रशासन, न्याय तथा लोककल्याण से सम्बन्धित सिद्धान्तों का गहन प्रतिपादन किया है। इन सिद्धान्तों का उद्देश्य केवल राज्य की सुरक्षा एवं विस्तार तक सीमित नहीं था, अपितु धर्म, अर्थ एवं लोकमंगल पर आधारित आदर्श शासन-व्यवस्था की स्थापना भी था। इसी समृद्ध परम्परा में कामन्दकीय नीतिसार एक विशिष्ट एवं प्रामाणिक ग्रन्थ के रूप में प्रतिष्ठित है, जिसमें राजधर्म, दण्डनीति, नेतृत्व, मंत्रणा, कूटनीति तथा अंतरराज्यीय संबंधों का अत्यन्त व्यवस्थित एवं व्यावहारिक विवेचन प्राप्त होता है। यह ग्रन्थ भारतीय राजनीतिक चिन्तन के विकास का एक महत्त्वपूर्ण सोपान है और कौटिलीय परम्परा का परिष्कृत एवं व्यावहारिक रूप प्रस्तुत करता है।

आचार्य कामन्दक द्वारा प्रणीत कामन्दकीय नीतिसार भारतीय नीतिशास्त्र की उन उत्कृष्ट कृतियों में से एक है, जिसमें शासन-व्यवस्था के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दोनों पक्षों का समन्वित निरूपण किया गया है। इस ग्रन्थ के विभिन्न सर्गों में राजा के गुण, मंत्रिपरिषद्, राज्य के सप्ताङ्ग, दण्डनीति, सैन्य-संगठन, विदेश-नीति तथा मण्डल सिद्धान्त का विस्तृत वर्णन मिलता है। विशेष रूप से अष्टम सर्ग **"मण्डलयोनिप्रकरणम्"** भारतीय विदेश-नीति एवं अंतरराष्ट्रीय संबंधों के अध्ययन की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमें राज्य और उसके पड़ोसी राज्यों के पारस्परिक सम्बन्ध, मित्र एवं शत्रु की पहचान, मध्यम एवं उदासीन राज्यों की भूमिका तथा शक्ति-संतुलन के सिद्धान्तों का सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत लेख में मण्डलयोनिप्रकरणम् के प्रत्येक श्लोक का मूल पाठ, IAST लिप्यंतरण, शब्दार्थ, भावार्थ, दार्शनिक विवेचन तथा आधुनिक संदर्भों सहित क्रमबद्ध विश्लेषण किया गया है। लेखक ने केवल शाब्दिक अर्थ प्रस्तुत करने तक स्वयं को सीमित नहीं रखा है, बल्कि प्रत्येक सिद्धान्त की समकालीन उपयोगिता को भी स्पष्ट किया है। विशेष रूप से मण्डल सिद्धान्त, सप्तप्रकृति सिद्धान्त, विजिगीषु के गुण, प्रताप का महत्त्व, शत्रु-लक्षण तथा मध्यम एवं उदासीन राज्यों की अवधारणाओं को आधुनिक भू-राजनीति, अंतरराष्ट्रीय संबंध, नेतृत्व, प्रबंधन तथा प्रशासनिक सिद्धान्तों के साथ जोड़कर विवेचित किया गया है। इस प्रकार यह लेख प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिन्तन और आधुनिक राजनीतिक विमर्श के मध्य एक प्रभावी सेतु का कार्य करता है।

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में, जहाँ अंतरराष्ट्रीय संबंध निरन्तर परिवर्तित हो रहे हैं, सामरिक गठबन्धनों का विस्तार हो रहा है तथा राष्ट्र अपनी विदेश-नीति को शक्ति-संतुलन एवं रणनीतिक हितों के आधार पर संचालित कर रहे हैं, वहाँ कामन्दकीय नीतिसार का मण्डल सिद्धान्त आश्चर्यजनक रूप से प्रासंगिक प्रतीत होता है। मित्र, शत्रु, मध्यम एवं उदासीन राज्यों का वर्गीकरण तथा उनके साथ व्यवहार की नीति आज भी अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अनेक सिद्धान्तों से साम्य रखती है। इस दृष्टि से यह ग्रन्थ केवल ऐतिहासिक या दार्शनिक महत्त्व का नहीं, बल्कि समकालीन कूटनीतिक एवं राजनीतिक अध्ययन का भी एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है।

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य कामन्दकीय नीतिसार के अष्टम सर्ग में प्रतिपादित मण्डल सिद्धान्त एवं राज्य-व्यवस्था सम्बन्धी अवधारणाओं का समालोचनात्मक अध्ययन करना, उनके दार्शनिक एवं राजनीतिक आधारों को स्पष्ट करना तथा उनकी आधुनिक प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना है। साथ ही यह अध्ययन यह भी प्रतिपादित करता है कि प्राचीन भारतीय नीतिशास्त्र केवल अतीत की बौद्धिक धरोहर नहीं है, बल्कि वर्तमान शासन-प्रणाली, कूटनीति, नेतृत्व तथा वैश्विक राजनीति के अनेक पक्षों को समझने में भी समान रूप से उपयोगी एवं प्रेरणादायी है।

अतः यह लेख संस्कृत साहित्य, भारतीय दर्शन, राजनीति विज्ञान, इतिहास, अंतरराष्ट्रीय संबंध तथा भारतीय ज्ञान-परम्परा के विद्यार्थियों, अध्येताओं एवं शोधार्थियों के लिए एक महत्त्वपूर्ण संदर्भ सामग्री के रूप में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होता है। इसके माध्यम से प्राचीन भारतीय नीतिशास्त्र की वैज्ञानिकता, व्यावहारिकता तथा समकालीन प्रासंगिकता का सम्यक् बोध होता है।

श्लोक १ (मण्डल-चिन्तन)

श्लोक

उपेतः कोशदण्डाभ्यां सामात्यः सह मन्त्रिभिः ।
दुर्गस्थश्चिन्तयेत्साधु मण्डलं मण्डलाधिपः ॥१॥

IAST

Upetaḥ kośadaṇḍābhyāṃ sāmātyaḥ saha mantribhiḥ |

Durgasthaścintayet sādhu maṇḍalaṃ maṇḍalādhipaḥ ||1||

शब्दार्थ

- उपेतः - युक्त/सुसज्जित
- कोशदण्डाभ्याम् - कोष (खजाना) एवं दण्ड (सेना/शासन) से
- सामात्यः - मंत्रियों/अमात्यों (प्रधान सलाहकार) से सहित
- सह - साथ
- मन्त्रिभिः - अन्य मंत्रियों/सचिवों के साथ
- दुर्गस्थः - दुर्ग/किले में स्थित
- चिन्तयेत् - विचार करे
- साधु - भलीभाँति/उचित रूप से
- मण्डलम् - मण्डल (पड़ोसी राज्यों का चक्र/समूह)
- मण्डलाधिपः - मण्डल का अधिपति/राजा ।

भावार्थ

जो राजा कोष (धन) एवं दण्ड (सेना) से युक्त हो, मंत्रियों एवं अमात्यों से सहित हो, तथा दुर्ग (सुरक्षित

स्थान) में स्थित हो -- वह मण्डल-अधिपति (राजा) अपने चारों ओर स्थित मण्डल (पड़ोसी राज्यों के चक्र) का भलीभाँति चिन्तन (विश्लेषण) करे।

दार्शनिक विवेचन

यह मण्डल-सिद्धान्त (Mandala Theory of Foreign Policy) का प्रारम्भ है, जो कौटिल्य-अर्थशास्त्र का आधार है। 'कोश-दण्ड' (अर्थ एवं बल) तथा 'मन्त्रि-सामात्य' (बुद्धि-सलाह) -- ये 'शक्ति-त्रय' (प्रभु-शक्ति, मन्त्र-शक्ति, उत्साह-शक्ति) के पूर्व-पक्ष हैं। 'दुर्गस्थः' -- विवेकपूर्ण आश्रय (स्थान-बल) भी आवश्यक है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'राजनीतिक-विश्लेषण' (Geo-political analysis) -- कोई भी राष्ट्र/कम्पनी (राजा) अपने प्रतिस्पर्धियों (मण्डल) का विश्लेषण तभी कर सकता है, जब उसके पास संसाधन (कोश), रक्षा-व्यवस्था (दण्ड), सलाहकार-मण्डल (मन्त्रि) एवं सुरक्षित आधार (दुर्ग) हों। यही 'SWOT Analysis' का प्राचीन रूप है।

श्लोक २ (विजिगीषु एवं पूर्ण-मण्डल)

श्लोक

रोचते सर्वभूतेभ्यः शशीवाखण्डमण्डलः ।
सम्पूर्णमण्डलस्तस्माद्विजिगीषुः सदा भवेत् ॥२॥

IAST

Rocate sarvabhūtebhyaḥ śaśīvākhaṇḍamaṇḍalaḥ |

Sampūrṇamaṇḍalastasmād vijigīṣuḥ sadā bhavet ||2||

शब्दार्थ

• रोचते - रुचिकर/प्रिय/आकर्षक होता है
• सर्वभूतेभ्यः - समस्त प्राणियों को
• शशीव -- चन्द्रमा के समान
• अखण्डमण्डलः - अखण्ड-मण्डल (बिना कलंक/पूर्ण-चक्र) वाला
• सम्पूर्णमण्डलः - सम्पूर्ण मण्डल (सप्त-प्रकृतियों से युक्त) वाला
• तस्मात् - इसलिए
• विजिगीषुः - विजय की इच्छा रखने वाला राजा
• सदा - सदा
• भवेत् - होना चाहिए ।

भावार्थ
जिस राजा का मण्डल (राज्य-अंग-समूह) अखण्ड (अविभाजित/पूर्ण) एवं सम्पूर्ण (सप्तांग-युक्त) है, वह सब प्राणियों को चन्द्रमा के समान आकर्षित करता है। अतः विजिगीषु (विजयेच्छु) राजा को सदा अपने मण्डल को सम्पूर्ण एवं अखण्ड रखने का प्रयास करना चाहिए। आन्तरिक-एकता एवं पूर्णता ही विजय-मूल है।

दार्शनिक विवेचन

'अखण्डमण्डलः' – चन्द्रमा की कलंक-रहित, पूर्ण-प्रकाश-स्थिति राज्य की सर्वांगीण-समृद्धि (Holistic Prosperity) का प्रतीक है। 'सम्पूर्णमण्डलः' – अर्थात् 'सप्त-प्रकृतियाँ' (स्वामी, अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, कोश, दण्ड, मित्र) – इन सातों की परिपूर्णता। बिना आन्तरिक-सामर्थ्य के बाह्य-विजय असम्भव है – यह 'आत्म-शक्ति' (Inner Strength) का सिद्धान्त है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक संगठन/राष्ट्र (विजिगीषु) के लिए 'सप्त-प्रकृतियाँ' – जनता (राष्ट्र), बुनियादी ढाँचा (दुर्ग), अर्थव्यवस्था (कोश), सुरक्षा-बल (दण्ड), प्रशासन (अमात्य), कूटनीति (मित्र) तथा नेतृत्व (स्वामी) – सबके सुदृढ़ एवं अखण्ड (एकीकृत) होने पर ही वह विश्व-मंच पर चन्द्रमा (शशी) के समान आकर्षक एवं प्रभावशाली बनता है।

श्लोक ३ (शुद्ध-अशुद्ध मण्डल एवं रथ-चक्र-उपमा)

श्लोक

रथीव राजते राजा विशुद्धे मण्डले चरन् ।
अशुद्धे मण्डले सर्वं शीर्यते रथचक्रवत् ॥३॥

IAST

Rathīva rājate rājā viśuddhe maṇḍale caran |
Aśuddhe maṇḍale sarvaṃ śīryate rathacakravat ||3||

शब्दार्थ
• रथीव – रथी (रथ-चालक/सारथी) के समान
• राजते – शोभा/प्रताप से युक्त होता है
• राजा – राजा
• विशुद्धे – विशुद्ध/शुद्ध/दोष-रहित मण्डल में
• चरन् – विचरण/संचालन करता हुआ
• अशुद्धे – अशुद्ध/दोषयुक्त मण्डल में

- सर्वम् – सब कुछ
- शीर्यते – शीर्ण/विध्वस्त/नष्ट हो जाता है
- रथचक्रवत् – रथ के चक्र (पहिये) के समान ।

भावार्थ
राजा विशुद्ध (दोष-रहित एवं सुसंगठित) मण्डल में विचरण करता हुआ रथी (सारथि) के समान शोभायमान (राजते) होता है; परन्तु अशुद्ध (असंगठित/दोषयुक्त) मण्डल में तो रथ-चक्र के समान सब कुछ (उसका राज्य, प्रतिष्ठा, सेना) शीर्ण/नष्ट (शीर्यते) हो जाता है। व्यवस्था ही राजा का 'पहिया' है।

दार्शनिक विवेचन

'रथी' (सारथि) का रूपक – जैसे सारथि रथ-चक्रों के सहारे आगे बढ़ता है, वैसे राजा 'मण्डल-अंगों' (सप्त-प्रकृतियों) के सहारे शासन करता है। 'विशुद्ध' अर्थात् 'सुव्यवस्थित' (समन्वित) – यहाँ 'शुद्धता' का अर्थ 'स्वच्छ-प्रशासन' (Corruption-free) एवं 'अंग-संगति' (Coordination) है। अशुद्धता में राज-व्यवस्था (रथ) स्वयं टूट जाती है।

आधुनिक संदर्भ

आज के 'गवर्नेंस-इंडेक्स' में सुशासन (विशुद्ध-मण्डल) वाली सरकारें (राजा) विकसित होती हैं; भ्रष्ट/असंगठित (अशुद्ध) सरकारें अपने ही 'रथ-चक्र' (संस्थाओं) के टूटने से विफल हो जाती हैं। यही 'संस्थागत-क्षमता' (Institutional Capacity) एवं 'व्यवस्था-पतन' (Systemic Failure) का प्राचीन सिद्धान्त है।

श्लोक ४ (पाँच प्रकृतियाँ – अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, कोश, दण्ड)

श्लोक

अमात्यराष्ट्रदुर्गाणि कोशो दण्डश्च पञ्चमः ।
एताः प्रकृतयस्तज्ज्ञैर्विजिगीषोरुदाहृताः ॥४॥

IAST

Amātyarāṣṭradurgāṇi kośo daṇḍaśca pañcamaḥ |
Etāḥ prakṛtayastajjñairvijigīṣorudāhṛtāḥ ||4||

शब्दार्थ
- अमात्य – अमात्य/मंत्री/प्रशासक
- राष्ट्र – राष्ट्र/प्रजा/क्षेत्र
- दुर्गाणि – दुर्ग/किले/सुरक्षा-स्थल (बहुवचन)
- कोशः – कोश/खजाना/वित्त

• दण्डः – दण्ड/सेना/शासन-शक्ति
• पञ्चमः – पाँचवाँ
• एताः – ये
• प्रकृतयः – प्रकृतियाँ/मूल-अंग
• तज्ज्ञैः – तत्-ज्ञ (उसके ज्ञाता/नीति-विशेषज्ञ)
• विजिगीषोः – विजय-इच्छुक राजा की
• उदाहृताः – उदाहृत/कही गयी हैं ।

भावार्थ
विजिगीषु (विजय की इच्छा रखने वाले) राजा की पाँच प्रकृतियाँ (मूल-अंग) हैं – (१) अमात्य (मंत्री/प्रशासन), (२) राष्ट्र (प्रजा/क्षेत्र), (३) दुर्ग (किले/सुरक्षा-स्थल), (४) कोश (खजाना/अर्थव्यवस्था), तथा (५) दण्ड (सेना/शासन-शक्ति)। इन्हें नीति-विशेषज्ञों (तज्ज्ञैः) ने विजिगीषु के लिए आवश्यक बताया है।

दार्शनिक विवेचन

ये पाँच 'प्रकृतियाँ' (Prakṛtis) – अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, कोश, दण्ड – राज्य के 'स्थायी-अंग' हैं। अर्थशास्त्र में इन्हें 'प्रकृति' (Nature/Essence) कहा गया है, क्योंकि ये राज्य के जड़-अंग हैं (जैसे वृक्ष की जड़ें)। 'तज्ज्ञैः' – इनका ज्ञान राजा के लिए अनिवार्य है, क्योंकि बिना इन पाँचों के राज्य-विजय असम्भव है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक राष्ट्र-निर्माण के पाँच स्तम्भ – (१) नौकरशाही/प्रशासन (अमात्य), (२) जनता एवं भूभाग (राष्ट्र), (३) सैन्य-ठिकाने/बुनियादी-ढाँचा (दुर्ग), (४) वित्तीय-संसाधन (कोश), (५) रक्षा-बल/विधि-व्यवस्था (दण्ड) – ये ही किसी भी सामर्थ्यवान राष्ट्र की आधारशिला हैं।

श्लोक ५ (सप्त प्रकृतियाँ – बृहस्पति-वचन)

श्लोक

एताः पञ्च तथा मित्रं सप्तमः पृथिवीपतिः ।
सप्तप्रकृतिकं राज्यमित्युवाच बृहस्पतिः ॥५॥

IAST

Etāḥ pañca tathā mitraṃ saptamaḥ pṛthivīpatiḥ |
Saptaprakṛtikaṃ rājyamityuvāca bṛhaspatiḥ ||5||

शब्दार्थ
• एताः – ये (पूर्वोक्त पाँच)
• पञ्च – पाँच

- तथा – तथा
- मित्रम् – मित्र/सहायक-राज्य
- सप्तमः – सातवाँ
- पृथिवीपतिः – पृथिवीपति/स्वयं राजा
- सप्तप्रकृतिकम् – सप्त-प्रकृतियों (सात अंगों) वाला
- राज्यम् – राज्य
- इति – इस प्रकार
- उवाच – कहा
- बृहस्पतिः – बृहस्पति (नीति-शास्त्र के आदि-गुरु) ने ।

भावार्थ
पूर्वोक्त पाँच (अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, कोश, दण्ड), तथा (छठा) मित्र (सहायक/संधि-राज्य) और (सातवाँ) स्वयं राजा (पृथिवीपति) – इस प्रकार बृहस्पति ने राज्य को 'सप्तप्रकृतिक' (सात अंगों वाला) कहा है। राज्य की समग्र-शक्ति इन सातों के संयोग से बनती है।

दार्शनिक विवेचन

'सप्तप्रकृतिकम्' – यह सप्तांग-सिद्धान्त (Seven-limbed theory of state) है, जो अर्थशास्त्र की आधार-भित्ति है। 'बृहस्पति' – देव-गुरु एवं नीति-शास्त्र-प्रणेता – के वचन से इस सिद्धान्त की शास्त्रीय-मान्यता स्थापित होती है। 'सप्तमः पृथिवीपतिः' – राजा स्वयं सातवाँ एवं सर्वोपरि अंग है, क्योंकि वह शेष छः को संचालित करता है (जैसे आत्मा शरीर को)।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक राज्य-शक्ति के सात अंग – प्रशासन, जनता/भूभाग, सुरक्षा-तंत्र, अर्थव्यवस्था, सैन्य-शक्ति, कूटनीतिक-सहयोगी (मित्र), तथा सर्वोपरि राष्ट्रप्रमुख (पृथिवीपति) – ये सातों मिलकर 'राष्ट्रीय-सामर्थ्य' (National Power) का निर्माण करते हैं, जैसा कि आधुनिक भू-राजनीति में 'कम्पोज़िट इंडेक्स' में माना जाता है।

श्लोक ६ (विजिगीषु की परिभाषा)

श्लोक

सम्पन्नस्तु प्रकृतिभिर्महोत्साहः कृतश्रमः ।
जेतुमेषणशीलश्च विजिगीषुरिति स्मृतः ॥६॥

IAST

Sampannastu prakṛtibhirmahotsāhaḥ kṛtaśramaḥ |
Jetumeṣaṇaśīlaśca vijigīṣuriti smṛtaḥ ||6||

शब्दार्थ

- सम्पन्नः – सम्पन्न/युक्त
- प्रकृतिभिः – सप्त-प्रकृतियों (अंगों) से
- महोत्साहः – महान-उत्साह/उमंग वाला
- कृतश्रमः – कृत-श्रम (परिश्रम/अभ्यास किया हुआ)
- जेतुम् – जीतने के लिए
- एषणशीलः – एषणा (इच्छा/शत्रु-खोज) में तत्पर
- विजिगीषुः – विजय-इच्छुक
- इति – इस प्रकार
- स्मृतः – स्मृत/कहा गया है ।

भावार्थ

जो राजा (सप्त) प्रकृतियों (अंगों) से सम्पन्न हो, महान् उत्साह (महोत्साहः) से युक्त हो, युद्ध/शासन-कला का अभ्यास (कृतश्रमः) किया हो, तथा शत्रु-राज्यों की खोज (एषणा) में सदा तत्पर (जेतुमेषणशीलः) रहता हो – वही 'विजिगीषु' (विजय-इच्छुक) कहलाता है। उत्साह एवं योजना ही विजय-मूल हैं।

दार्शनिक विवेचन

'विजिगीषु' – यह अर्थशास्त्र का केन्द्रीय पात्र है। इसके तीन लक्षण – (१) 'सम्पन्नः' – साधन-सम्पन्नता (सप्त-प्रकृति), (२) 'महोत्साहः' – मानसिक-बल (Utsāha), (३) 'कृतश्रमः' – अभ्यास/अनुभव, (४) 'एषणशीलः' – निरन्तर-अवसर-खोज (Proactive aggression)। 'जेतुम्' – विजय यहाँ केवल युद्ध नहीं, अपितु 'लक्ष्य-प्राप्ति' है। यह 'पुरुषार्थ-सिद्धि' का राजनीतिक स्वरूप है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'बिजनेस-लीडर' या 'वैश्विक-सुपरपावर' (विजिगीषु) वह है, जिसके पास संसाधन (प्रकृतियाँ), अदम्य-जोश (महोत्साह), निरन्तर-सीख-अनुभव (कृतश्रम), तथा अवसर-खोज-क्षमता (एषणा) हो। यही 'प्रतिस्पर्धी-लाभ' (Competitive Advantage) एवं 'अग्रगामी-रणनीति' (Proactive Strategy) का मूल है।

श्लोक ७ (विजिगीषु के गुण – १)

श्लोक

कौलीन्यं वृद्धसेवित्वमुत्साहः स्थूललक्षता ।
चित्तज्ञता बुद्धिमत्त्वं प्रागल्भ्यं सत्यवादिता ॥७॥

IAST

Kaulīnyaṃ vṛddhasevitvamutsāhaḥ sthūlalakṣatā |
Cittajñatā buddhimattvaṃ prāgalbhyaṃ satyavāditā ||7||

शब्दार्थ

- कौलीन्यम् – कुलीनता/उत्तम वंश-परम्परा
- वृद्धसेवित्वम् – वृद्धों/अनुभवियों की सेवा/सेवन (उनसे ज्ञान-ग्रहण)
- उत्साहः – उत्साह/उमंग
- स्थूललक्षता – स्थूल-लक्षता (बड़े/महत्त्वपूर्ण लक्ष्य को देखने की क्षमता / सूक्ष्म-दृष्टि-त्याग)
- चित्तज्ञता – चित्त-ज्ञता (दूसरों के मन/भाव को जानने की क्षमता)
- बुद्धिमत्त्वम् – बुद्धिमत्ता
- प्रागल्भ्यम् – प्रागल्भ्य/निर्भीकता/धृष्टता-रहित साहस
- सत्यवादिता – सत्यवादिता/सत्य-भाषण ।

भावार्थ

विजिगीषु राजा के आठ प्रथम गुण हैं – (१) कुलीनता, (२) अनुभवियों (वृद्धों) से ज्ञान-ग्रहण, (३) उत्साह, (४) महान् लक्ष्य-दृष्टि (स्थूललक्षता), (५) मनोवैज्ञानिक-दृष्टि (चित्तज्ञता), (६) बुद्धिमत्ता, (७) प्रागल्भ्य (साहस/निर्भीकता), तथा (८) सत्य-भाषण। ये नैतिक एवं बौद्धिक गुण विजिगीषु का आधार हैं।

दार्शनिक विवेचन

'वृद्धसेवित्वम्' – 'सेवित्व' का अर्थ 'सेवन' (अनुसरण/परिचर्या) नहीं, बल्कि 'अनुभव-ग्रहण' है (जैसे शिष्य गुरु की सेवा करके ज्ञान प्राप्त करता है)। 'स्थूललक्षता' – 'क्षुद्र-लक्ष्य' (क्षुद्रता) का त्याग एवं 'महद्-दृष्टि' (Macro vision) – यह 'उदार-दर्शन' का गुण है। 'चित्तज्ञता' – 'सहानुभूति' (Empathy) एवं 'मनोवैज्ञानिक-कौशल' – यह सांख्य-योग के 'चित्त-वृत्ति-ज्ञान' से सम्बद्ध है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'लीडरशिप-क्वालिटी' – (१) अच्छी पृष्ठभूमि (कुलीनता), (२) मेंटरशिप (वृद्धसेवित्व), (३) पैशन (उत्साह), (४) विज़न (स्थूललक्षता), (५) भावनात्मक-बुद्धि (चित्तज्ञता), (६) एक्यूमेन (बुद्धिमत्ता), (७) आत्म-विश्वास (प्रागल्भ्य), (८) ईमानदारी (सत्यवादिता) – ये किसी भी सफल सीईओ/राष्ट्रनेता के अनिवार्य गुण माने जाते हैं।

श्लोक ८ (विजिगीषु के गुण – २)

श्लोक

आदीर्घसूत्रता क्षौद्र्यं प्रश्रयः स्वप्रधानता ।
देशकालज्ञता दार्ढ्यं सर्वक्लेशसहिष्णुता ॥८॥

IAST

Ādīrghasūtratā kṣaudryaṃ praśrayaḥ svapradhānatā |
Deśakālajñatā dārḍhyaṃ sarvakleśasahiṣṇutā ||8||

शब्दार्थ

- आदीर्घसूत्रता – दीर्घसूत्रता (कार्य-विलम्ब) का अभाव (आ+दीर्घसूत्रता = अविलम्बिता)
- क्षौद्यम् – क्षौद्र (मधु) का भाव = मधुरता/सरलता/सौम्यता
- प्रश्रयः – प्रश्रय (विनम्रता/नम्रता)
- स्वप्रधानता – स्व-प्रधानता (आत्म-गरिमा/निजी-नेतृत्व-क्षमता)
- देशकालज्ञता – देश (स्थान) एवं काल (समय) का ज्ञान
- दार्ढ्यम् – दार्ढ्य (दृढ़ता/स्थिरता)
- सर्वक्लेशसहिष्णुता – सभी कष्टों (क्लेश) को सहन करने की क्षमता ।

भावार्थ

विजिगीषु राजा के अगले सात गुण हैं – (१) कार्य-विलम्ब-रहितता (आदीर्घसूत्रता), (२) मधुरता/सरलता (क्षौद्यम्), (३) विनम्रता (प्रश्रयः), (४) आत्म-गरिमा/नेतृत्व-क्षमता (स्वप्रधानता), (५) देश-काल का ज्ञान, (६) दृढ़ता, तथा (७) सभी कष्टों को सहन करने की शक्ति। ये क्रियात्मक एवं चारित्रिक गुण हैं।

दार्शनिक विवेचन

'आदीर्घसूत्रता' – 'दीर्घसूत्रता' (प्रोक्रैस्टिनेशन) का निषेध – यह 'कर्म-योग' का प्रारम्भ है। 'क्षौद्यम्' – मधु (क्षौद्र) के समान मधुर-व्यवहार – 'सौजन्य' (Affability) है, जो 'प्रश्रय' (विनम्रता) के साथ मिलकर 'दूसरों को जीतने' का मन्त्र है। 'स्वप्रधानता' – स्वयं पर निर्भरता (Self-reliance) – यह 'अहंकार' नहीं, अपितु 'आत्म-विश्वास' एवं 'स्वतन्त्र-चिन्तन' है। 'सर्वक्लेशसहिष्णुता' – यह 'तप' (सहनशक्ति) है, जो योग-दर्शन का अभ्यास है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक प्रबंधन में 'प्रोएक्टिव' बनाम 'प्रोक्रैस्टिनेटर' (आदीर्घसूत्रता), 'इमोशनल इंटेलिजेंस' (क्षौद्य/प्रश्रय), 'सेल्फ-लीडरशिप' (स्वप्रधानता), 'अडाप्टिविटी' (देश-काल-ज्ञान), 'रेजिलिएंस' (दार्ढ्य), एवं 'स्ट्रेस-मैनेजमेंट' (सर्वक्लेशसहिष्णुता) – ये सभी 'विजिगीषु' के आधुनिक समकक्ष हैं।

श्लोक ९ (विजिगीषु के गुण – ३)

श्लोक

सर्वविज्ञानिता दाक्ष्यमूर्जः संवृत्तमन्त्रता ।
अविसंवादिता शौर्यं भक्तिज्ञत्वं कृतज्ञता ॥९॥

IAST

Sarvavijñānitā dākṣyamūrjaḥ saṃvṛttamantratā |
Avisaṃvāditā śauryaṃ bhaktijñatvaṃ kṛtajñatā ||9||

शब्दार्थ

- सर्वविज्ञानिता – सम्पूर्ण शास्त्रों/विषयों का ज्ञान
- दाक्ष्यम् – दाक्ष्य/कुशलता/चतुरता
- ऊर्जः – ऊर्ज/बल/पराक्रम
- संवृत्तमन्त्रता – संवृत्त (सम्पन्न/गुप्त) मन्त्रता – मंत्रणा/गोपनीयता-कला
- अविसंवादिता – विसंवाद (विरोध/झगड़ा/असहमति) का अभाव – सबके साथ समन्वय-क्षमता
- शौर्यम् – शौर्य/वीरता
- भक्तिज्ञत्वम् – भक्ति-ज्ञत्व – निष्ठावान् व्यक्तियों को पहचानने की क्षमता
- कृतज्ञता – कृतज्ञता (उपकार-स्मरण) ।

भावार्थ

विजिगीषु के आठ अन्य गुण – (१) सर्वविषय-ज्ञान (सर्वविज्ञानिता), (२) कुशलता (दाक्ष्य), (३) पराक्रम/बल (ऊर्जः), (४) गोपनीय-मंत्रणा-कला (संवृत्तमन्त्रता), (५) सबसे समन्वय (अविसंवादिता), (६) वीरता (शौर्य), (७) निष्ठावानों की पहचान (भक्तिज्ञत्व), तथा (८) कृतज्ञता। ये सामरिक एवं नैतिक गुण हैं।

दार्शनिक विवेचन

'सर्वविज्ञानिता' – अर्थात् केवल युद्ध-कला ही नहीं, सभी विद्याओं (अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र, दर्शन) में पारंगतता – यह 'राजर्षि' (विद्वान-राजा) का गुण है। 'संवृत्तमन्त्रता' – मन्त्र-गोपन (Secrecy of counsel) – यह अर्थशास्त्र की 'मन्त्र-परीक्षा' एवं 'गुप्त-नीति' का प्राण है। 'अविसंवादिता' – सहमति-निर्माण (Consensus building) – यह 'सामवाय' (सम्मिलित-नीति) का आधार है। 'भक्तिज्ञत्व' – वफादारों की पहचान (Loyalty detection) – यह 'चित्त-ज्ञता' का ही एक रूप है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'वैश्विक-नेता' में (१) बहु-विषयक-ज्ञान (सर्वविज्ञानिता), (२) निपुणता (दाक्ष्य), (३) प्रभाव (ऊर्ज), (४) रणनीतिक-गोपनीयता (संवृत्तमन्त्रता), (५) कूटनैतिक-सौहार्द (अविसंवादिता), (६) साहस (शौर्य),

(७) निष्ठा-परीक्षण (भक्तिज्ञत्व), (८) आभार-भाव (कृतज्ञता) – ये ही 'सॉफ्ट-पॉवर' एवं 'हार्ड-पॉवर' के मेल से युक्त 'प्रभावशाली-नेतृत्व' के गुण हैं।

श्लोक १० (विजिगीषु के गुण – ४)

श्लोक

शरणागतवात्सल्यममर्षित्वमचापलम् ।
स्वकर्मदृष्टशास्त्रत्वं कृतित्वं दीर्घदर्शिता ॥१०॥

IAST

Śaraṇāgatavātsalyamamarṣitvamacāpalam |
Svakarmadṛṣṭaśāstratvaṃ kṛtitvaṃ dīrghadarśitā ||10||

शब्दार्थ
- शरणागतवात्सल्यम् – शरणागत (आश्रय माँगने वाले) पर वात्सल्य/स्नेह/रक्षा-भाव
- अमर्षित्वम् – अमर्ष (क्षोभ/अधीरता/क्रोध) का अभाव – धैर्य
- अचापलम् – चापल (चंचलता/अस्थिरता) का अभाव – स्थिरता
- स्वकर्मदृष्टशास्त्रत्वम् – स्व-कर्म में शास्त्र-दृष्टि रखना (कर्म एवं शास्त्र का समन्वय)
- कृतित्वम् – कृतित्व (पराक्रम/कर्म-निष्पादन-क्षमता)
- दीर्घदर्शिता – दीर्घदर्शिता (दीर्घकालीन/सुदूर-दृष्टि) ।

भावार्थ
विजिगीषु के अन्तिम छः गुण – (१) आश्रितों/शरणागतों पर वात्सल्य (शरणागतवात्सल्य), (२) अधीरता/क्रोध-रहितता (अमर्षित्वम्), (३) स्थिरता/अचंचलता (अचापलम्), (४) शास्त्रानुकूल-कर्म (स्वकर्मदृष्टशास्त्रत्वम्), (५) कर्म-दक्षता (कृतित्वम्), तथा (६) दूरदर्शिता (दीर्घदर्शिता)। ये चारित्रिक, नैतिक एवं बौद्धिक गुणों का सम्मिलित रूप हैं, जो विजिगीषु को पूर्ण बनाते हैं।

दार्शनिक विवेचन

'शरणागतवात्सल्यम्' – यह 'क्षत्रिय-धर्म' का उत्कृष्ट गुण है – 'शरणागत-रक्षा' (Protection of refugees) – यह 'धर्म' एवं 'करुणा' का मेल है। 'अमर्षित्वम्' – 'अमर्ष' (आक्रोश) का अभाव – यह 'स्थितप्रज्ञ' (अविकार) का लक्षण है। 'स्वकर्मदृष्टशास्त्रत्वम्' – कर्म एवं शास्त्र (सिद्धान्त) का समन्वय – यह 'प्रमाण-मीमांसा' (Theory-Practice balance) है। 'दीर्घदर्शिता' – तात्कालिक-लाभ नहीं, दीर्घकालीन-हित (Long-term vision) – यह राज-नीति का परम-सौभाग्य है। **इन सम्पूर्ण गुणों** का समावेश ही 'विजिगीषु' को 'चक्रवर्ती' (सम्राट) बनाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'वैश्विक-नेतृत्व' के छः लक्षण – (१) शरणार्थी/वंचितों के प्रति करुणा (शरणागतवात्सल्य), (२) संकट में धैर्य (अमर्षित्व), (३) निरन्तरता (अचापलम्), (४) सिद्धान्त-व्यवहार-सामंजस्य (स्वकर्मदृष्टशास्त्रत्व), (५) उत्कृष्ट-निष्पादन (कृतित्वम्), एवं (६) दीर्घकालीन-रणनीति (दीर्घदर्शिता) – ये सभी 'ट्रान्सफॉर्मेशनल लीडरशिप' एवं 'सतत-विकास-लक्ष्य' (SDGs) के मूल हैं। यही 'भविष्य-उन्मुख-शासन' (Future-ready Governance) का प्राचीनतम सूत्र है।

श्लोक ११ (विजिगीषु के गुण – समापन)

श्लोक

जितश्रमत्वं वाग्मित्वम् अक्रूरपरिवारता ।
प्रकृतिस्फीतता चेति विजिगीषोर्गुणोदयः ॥११॥

IAST

Jitaśramatvaṃ vāgmitvam akrūraparivāratā |
Prakṛtisphītatā ceti vijigīṣorguṇodayaḥ ||11||

शब्दार्थ

- जितश्रमत्वम् – श्रम पर विजय (परिश्रम-निष्ठा / आलस्य-त्याग)
- वाग्मित्वम् – वाक्पटुता / सुन्दर-प्रभावी-वाणी
- अक्रूरपरिवारता – क्रूर-रहित (सौम्य) परिवार/अमात्य-वर्ग (अर्थात् क्रूर/दुष्ट सहयोगियों का अभाव)
- प्रकृतिस्फीतता – प्रकृतियों (राज्यांगों) की स्फीति/समृद्धि/विस्तार
- च – तथा
- इति – इस प्रकार
- विजिगीषोः – विजयेच्छु राजा के
- गुणोदयः – गुणों का उदय/समुच्चय (पूर्ण-वर्णन) है ।

भावार्थ

विजिगीषु राजा के अन्तिम चार गुण हैं – परिश्रम पर विजय (जितश्रमत्व), प्रभावशाली वाणी (वाग्मित्व), सौम्य एवं सज्जन सहयोगी-वर्ग (अक्रूरपरिवारता), तथा राज्य-प्रकृतियों (सप्तांग) की समृद्धि/विस्तार (प्रकृतिस्फीतता) – इस प्रकार (इन सभी गुणों सहित) विजिगीषु के गुणों का समग्र उदय (पूर्ण-गुण-कथन) होता है। यह उन ३०-३४ गुणों का समापन-बिन्दु है।

दार्शनिक विवेचन

'जितश्रमत्वम्' – अर्थात् 'श्रम-सहिष्णुता' एवं 'अलस्य-निवृत्ति', जो 'उत्साह' का चरम है। 'वाग्मित्वम्' – केवल वाचालता नहीं, बल्कि 'मन्त्र-शक्ति' (सलाह-देने/समझाने की क्षमता), जो 'बृहस्पति-कला' है। 'अक्रूरपरिवारता' – 'क्रूर' (दुष्ट/अत्याचारी) अमात्यों का अभाव – यह 'सुशासन' एवं 'मन्त्रि-परिषद्-शुद्धि' को दर्शाता है। 'प्रकृतिस्फीतता' – सातों अंगों की वृद्धि, जो राज्य के 'विकास-सूचक' (Indicators of growth) हैं। इस प्रकार यह श्लोक गुण-वर्णन का सार-संग्रह है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक नेतृत्व में – 'हार्ड-वर्क' (जितश्रम), 'उत्कृष्ट-संचार-कौशल' (वाग्मित्व), 'भ्रष्ट-रहित टीम' (अक्रूरपरिवारता), एवं 'संगठनात्मक-विस्तार' (प्रकृतिस्फीतता) – ये ही किसी सीईओ/राष्ट्रनेता को शिखर पर पहुँचाते हैं।

श्लोक १२ (प्रताप का महत्व – सिंह-उपमा)

श्लोक

सर्वैर्गुणैर्विहीनोऽपि स राजा यः प्रतापवान् ।
प्रतापयुक्तात्त्रस्यन्ति परे सिंहान्मृगा इव ॥१२॥

IAST

Sarvairguṇairvihīno'pi sa rājā yaḥ pratāpavān |
Pratāpayuktāt trasyanti pare siṃhānmṛgā iva ||12||

शब्दार्थ

- सर्वैः – समस्त
- गुणैः – गुणों से
- विहीनः – रहित
- अपि – भी
- सः – वह
- राजा – राजा
- यः – जो
- प्रतापवान् – प्रताप/तेज/पराक्रम से युक्त है
- प्रतापयुक्तात् – प्रतापी (राजा) से
- त्रस्यन्ति – भयभीत होते हैं
- परे – शत्रु/अन्य
- सिंहात् – सिंह से

• मृगाः – हिरण
• इव – समान ।

भावार्थ
जो राजा सम्पूर्ण गुणों से रहित (सर्वैर्गुणैर्विहीन) भी हो, परन्तु यदि वह प्रतापवान् (तेज/पराक्रमी) है, तो उस प्रतापी राजा से शत्रु उसी प्रकार भयभीत होते हैं, जैसे हिरण (मृग) सिंह से डरते हैं। गुणों से परे, केवल 'प्रताप' (आत्म-तेज/सामर्थ्य) ही भय-उत्पादन हेतु पर्याप्त है।

दार्शनिक विवेचन

'प्रताप' – यह 'तेज' (अर्जित-सामर्थ्य) है, जो बाह्य-गुणों (ज्ञान, विनय आदि) से स्वतन्त्र है। यह 'क्षत्र-प्रभाव' (Warrior-aura) है, जो सिंह के समान स्वाभाविक-भय-उत्पादक है। 'मृगा इव' – जैसे हिरण सिंह के केवल 'अस्तित्व' (गर्जना/दर्शन) मात्र से भयभीत हो जाते हैं, वैसे ही शत्रु प्रतापी राजा के नाम-मात्र से भयभीत होते हैं। यह 'भौतिक-गुण' पर 'मानसिक-प्रभाव' (Aura/Charisma) की विजय है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक भू-राजनीति में 'सैन्य-सामर्थ्य' (प्रताप) प्रायः सभी राजनयिक-गुणों (योग्यता, लोकतन्त्र आदि) से अधिक प्रभावी होता है – एक प्रतापी राष्ट्र अपने विरोधियों (परे) में भय उत्पन्न करता है, चाहे उसके अन्य सूचकांक (गुण) कमजोर क्यों न हों। यही 'सॉफ्ट-पॉवर' एवं 'हार्ड-पॉवर' का मूल अन्तर है।

श्लोक १३ (प्रताप एवं समृद्धि-उत्पादन)

श्लोक

**प्रतापयुक्तो नृपतिः प्राप्नोति महतीं श्रियम् ।
तस्मादुत्थानयोगेन प्रतापं जनयेत्प्रभुः ॥१३॥**

IAST

**Pratāpayukto nṛpatiḥ prāpnoti mahatīṃ śriyam |
Tasmādutthānayogena pratāpaṃ janayet prabhuḥ ||13||**

शब्दार्थ
• प्रतापयुक्तः – प्रताप से युक्त
• नृपतिः – राजा
• प्राप्नोति – प्राप्त करता है
• महतीम् – महान्
• श्रियम् – श्री/समृद्धि/ऐश्वर्य
• तस्मात् – इसलिए

• उत्थानयोगेन – उत्थान (प्रयत्न/उद्योग) के योग (साधन) से
• प्रतापम् – प्रताप
• जनयेत् – उत्पन्न/अर्जित करे
• प्रभुः – प्रभु/शासक/राजा ।

भावार्थ
प्रतापी राजा महान् समृद्धि (श्री) को प्राप्त करता है। इसलिए राजा को चाहिए कि वह उत्थान (निरन्तर प्रयत्न एवं उद्योग) के द्वारा अपने प्रताप का सृजन (जनयेत्) करे। प्रताप केवल जन्मजात नहीं, बल्कि अर्जित (साधना) से प्राप्त होता है।

दार्शनिक विवेचन

'उत्थानयोगः' – 'योग' अर्थात् 'साधन' एवं 'उत्थान' अर्थात् 'उद्योग/पुरुषार्थ'। यह 'प्रताप' को 'कर्म-जन्य' (अर्जित) बताता है, न कि 'दैव-जन्य'। 'श्री' (लक्ष्मी) प्रताप का फल है। यह 'कर्म-वाद' (भाग्यवाद-विरोधी) का प्रबल पक्ष है – जैसे सूर्य अपने ताप (प्रताप) से सोना (श्री) गलाता है, वैसे राजा अपने प्रयास से समृद्धि प्राप्त करता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'नेशनल पावर' – सैन्य/आर्थिक-प्रताप (प्रताप) किसी को भी 'सॉफ्ट पावर' प्रदान करता है, किन्तु यह प्रताप निरन्तर प्रयत्न (उत्थान) – जैसे जीडीपी-वृद्धि, तकनीकी-नवाचार, शिक्षा-सुधार – से ही उत्पन्न होता है। यह 'सतत-विकास' (Sustainable Development) का सूत्र है।

श्लोक १४ (शत्रु का लक्षण – एकाग्रता एवं दारुण-विजिगीषु)

श्लोक

एकार्थाभिनिवेशित्वमरिलक्षणमुच्यते ।
दारुणस्तु स्मृतः शत्रुर्विजिगीषुगुणान्वितः ॥१४॥

IAST

Ekārthābhiniveśitvamarilakṣaṇamucyate |
Dāruṇastu smṛtaḥ śatrurvijigīṣuguṇānvitaḥ ||14||

शब्दार्थ
• एकार्थाभिनिवेशित्वम् – एक अर्थ (लक्ष्य/उद्देश्य) में अभिनिवेश (तन्मयता/आसक्ति)
• अरिलक्षणम् – शत्रु का लक्षण
• उच्यते – कहा जाता है
• दारुणः – दारुण/भयानक/प्रबल

• स्मृतः – स्मृत/कहा गया
• शत्रुः – शत्रु
• विजिगीषुगुणान्वितः – विजिगीषु के गुणों (प्रताप/उत्साह आदि) से युक्त ।

भावार्थ
शत्रु का प्रथम लक्षण (अरिलक्षणम्) 'एक उद्देश्य में तन्मयता' (एकार्थाभिनिवेशित्व) कहा गया है। परन्तु जो शत्रु विजिगीषु (विजय-इच्छुक राजा) के समान गुणों (प्रताप, उत्साह, बुद्धि आदि) से युक्त होता है, वह 'दारुण' (भयानक/प्रबल) शत्रु कहलाता है। योग्य शत्रु ही विजिगीषु की कसौटी है।

दार्शनिक विवेचन

'एकार्थाभिनिवेशित्वम्' – एक लक्ष्य पर केन्द्रित मानसिकता (Single-minded focus) – यह सामान्यतः शत्रु का गुण माना गया है (क्योंकि वह विजिगीषु को हानि पहुँचाने में तत्पर रहता है)। परन्तु यदि यह गुण विजिगीषु-तुल्य-सामर्थ्य (प्रताप/गुण-सम्पन्नता) से युक्त हो, तो वह शत्रु 'दारुण' (अत्यन्त-खतरनाक) है – क्योंकि वह विजिगीषु की ही भाँति कार्य-क्षम है। यह 'अर्थशास्त्र' का 'सम-शक्ति-शत्रु-सिद्धान्त' है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'प्रतिस्पर्धा-विश्लेषण' (Competitive Analysis) – जो प्रतिद्वन्द्वी (शत्रु) 'एक-लक्ष्य-केन्द्रित' (एकार्थाभिनिवेशी) एवं 'विजिगीषु-गुणी' (संसाधन-सम्पन्न एवं प्रतापी) होता है, वही 'खतरनाक-प्रतियोगी' (दारुण-शत्रु) होता है, क्योंकि वह स्वयं बाज़ार-नेता की तरह व्यवहार करता है।

श्लोक १५ (सुख-विध्वंसनीय शत्रु के लक्षण)

श्लोक

लुब्धः क्रूरोऽलसोऽसत्यः प्रमादी भीरुरस्थिरः ।
मूढो योधावमन्ता च सुखोच्छेद्यो रिपुः स्मृतः ॥१५॥

IAST

Lubdhaḥ krūro'laso'satyaḥ pramādī bhīrurasthiraḥ |
Mūḍho yodhāvamantā ca sukhocchedyo ripuḥ smṛtaḥ ||15||

शब्दार्थ
• लुब्धः – लोभी/लालची
• क्रूरः – क्रूर/निष्ठुर
• अलसः – आलसी
• असत्यः – असत्यवादी/झूठा
• प्रमादी – प्रमादी/लापरवाह

• भीरुः – भीरु/कायर
• अस्थिरः – अस्थिर/चंचल
• मूढः – मूढ/बुद्धिहीन
• योधावमन्ता – योद्धाओं/सैनिकों/सेनानियों का अवमान करने वाला
• सुखोच्छेद्यः – सुखेन (आसानी से) उच्छेद्य (नष्ट/पराजित किए जाने योग्य)
• रिपुः – शत्रु
• स्मृतः – कहा गया है ।

भावार्थ

जो शत्रु लोभी, क्रूर, आलसी, असत्यवादी, प्रमादी (लापरवाह), भीरु, अस्थिर, मूढ, तथा अपने योद्धाओं (सेना) का अवमान करने वाला हो – वह नौ-दोष-युक्त शत्रु आसानी से (सुखेन) नष्ट/पराजित (उच्छेद्य) किया जा सकता है। ये सभी दोष शत्रु-सामर्थ्य को क्षीण करते हैं।

दार्शनिक विवेचन

ये नौ दोष – 'रजोगुण' (लोभ, क्रूरता, चंचलता) एवं 'तमोगुण' (आलस्य, मूढता, भीरुता) – के परिणाम हैं। 'योधावमन्ता' – सेना का अपमान करना शत्रु के पतन का मूल है, क्योंकि सेना ही राज्य-शक्ति का आधार है। यह 'अर्थशास्त्र' के 'सुख-उच्छेद्य-शत्रु-निदान' (Easily conquerable enemy identification) का सूत्र है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'बिजनेस-कम्पटीटर' – जो कम्पनी लालची (अत्यधिक मुनाफाखोर), क्रूर (ग्राहक-विरोधी), आलसी (नवाचार-विरोधी), विश्वासघाती (असत्य), लापरवाह (प्रमादी), डरपोक (भीरु), अस्थिर, मूढ, एवं अपने कर्मचारियों (योधा) का अवमान करती है – वह प्रतिस्पर्धियों के लिए 'सुख-विध्वंसनीय' (आसानी से पछाड़ी जाने योग्य) होती है।

श्लोक १६ (मण्डल के अग्र-स्थित चार अंग)

श्लोक

अरिर्मित्रमरेर्मित्रं मित्रमित्रम् अतः परम् ।
तथारिमित्रमित्रं च विजिगीषोः पुरः स्थिताः ॥१६॥

IAST

Arirmitramarer mitraṃ mitramitram ataḥ param |

Tathārimitramitraṃ ca vijigīṣoḥ puraḥ sthitāḥ ||16||

शब्दार्थ
- अरिः - शत्रु (प्रथम)
- मित्रम् - मित्र/सहायक-राज्य (द्वितीय)
- अरेर्मित्रम् - शत्रु का मित्र (तृतीय)
- मित्रमित्रम् - मित्र का मित्र (चतुर्थ)
- अतः परम् - इसके बाद (आगे)
- तथा - तथा
- अरिमित्रम् - शत्रु-मित्र (यह 'अरेर्मित्रम्' का ही पर्याय है)
- च - तथा
- विजिगीषोः - विजय-इच्छुक राजा के
- पुरः - आगे/सम्मुख
- स्थिताः - स्थित हैं ।

भावार्थ
(विजिगीषु के सामने/पुरः) क्रमशः चार प्रकार के राज्य स्थित हैं -- (१) अरि (शत्रु), (२) मित्र (सहायक), (३) अरेर्मित्र (शत्रु का मित्र), तथा (४) मित्रमित्र (मित्र का मित्र)।

दार्शनिक विवेचन

'पुरः स्थिताः' – ये विजिगीषु के सामने वाले दिशा-क्रम (अग्र-क्षितिज) में स्थित राज्य हैं। 'अरिमित्रम्' – यह 'अरेर्मित्रम्' (शत्रु-मित्र) का ही सूचक है। यहाँ 'च' शब्द 'मित्रम्' के साथ जुड़कर पाँचवाँ अंग (वास्तव में ये चार ही मुख्य हैं) दर्शाता है। यह 'अर्थशास्त्र' का 'चतुष्क-मण्डल' (Fourfold circle) है – जिसमें प्रत्येक राज्य अपने से आगे के राज्य का सहायक/प्रतिपक्षी होता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'भू-राजनीतिक-मण्डल' (Geopolitical Sphere) – किसी राष्ट्र के सम्मुख उसके प्रत्यक्ष शत्रु (अरि), सहयोगी (मित्र), शत्रु के सहयोगी (अरेर्मित्र), तथा सहयोगी के सहयोगी (मित्रमित्र) – ये चार परतें 'गठबन्धन-चक्र' (Alliance-dynamics) का निर्माण करती हैं, जैसे नाटो/शंघाई-समूहों में देखा जाता है।

श्लोक १७ (मण्डल के पश्च-स्थित दो अंग)

श्लोक

पार्ष्णिग्राहस्ततः पश्चादाक्रन्दस्तदनन्तरः ।
आसारावनयोश्चेति विजिगीषोस्तु पृष्ठतः ॥१७॥

IAST

Pārṣṇigrāhastataḥ paścādākrandastadanantaraḥ |
Āsārāvanayośceti vijigīṣostu pṛṣṭhataḥ ||17||

शब्दार्थ

• पार्ष्णिग्राहः – पार्ष्णिग्राह (पिछले भाग/पिछली एड़ी पर आक्रमण करने वाला शत्रु)
• ततः – उसके बाद
• पश्चात् – पीछे (पिछली दिशा में)
• आक्रन्दः – आक्रन्द (पीछे स्थित सहायक-राज्य / संकट-काल में सहायता हेतु पुकारने वाला)
• तदनन्तरः – उस (आक्रन्द) के अनन्तर/बाद
• आसार – आसार (पार्श्व/किनारे का शत्रु? या 'आसार' = सहायक सेना?)
• अन्वयोः – अन्वय (पीछे की सहायक-शृंखला)
• च – तथा
• इति – इस प्रकार
• विजिगीषोः – विजय-इच्छुक राजा के
• पृष्ठतः – पीछे/पश्च-भाग में
• स्थिताः – स्थित हैं ।

भावार्थ

विजिगीषु के पीछे (पृष्ठतः) क्रमशः दो/चार प्रकार के राज्य स्थित हैं – (१) पार्ष्णिग्राह (पीछे से आघात करने वाला शत्रु), (२) आक्रन्द (पीछे स्थित सहायक/मित्र, जो संकट में सहायता हेतु पुकारता है), तथा (३-४) आसार एवं अन्वय (अन्य पार्श्वगत/सहायक-शक्तियाँ)। इस प्रकार मण्डल का पश्च-भाग भी पूर्ण होता है।

दार्शनिक विवेचन

'पार्ष्णिग्राह' – अर्थशास्त्र का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग – पीठ/पिछली एड़ी (पार्ष्णि) को दबाने वाला शत्रु (जो पीछे से आक्रमण करता है)। 'आक्रन्द' – पीछे स्थित मित्र, जो संकट-काल में 'आ-क्रन्द' (रुदन/सहायता-पुकार) पर आता है। 'आसार' एवं 'अन्वय' – अन्य सहायक अंग। यह 'मण्डल-रचना' का द्वि-आयामी (अग्र-पश्च) स्वरूप है – जो 'अर्थशास्त्र' की 'राज-कूटनीति' का प्राण है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक सैन्य-रणनीति में 'Two-front war' (द्वि-मोर्चा-युद्ध) – पार्ष्णिग्राह (पिछला शत्रु) एवं आक्रन्द (पिछला सहयोगी) – ये दोनों किसी राष्ट्र की 'सुरक्षा-दुर्बलता' या 'सामरिक-गहराई' (Strategic depth) का निर्धारण करते हैं। उदाहरण – पाकिस्तान के लिए भारत (अग्र) एवं अफगानिस्तान (पार्ष्णिग्राह)।

श्लोक १८ (मध्यम राजा – अरि एवं विजिगीषु के मध्य)

श्लोक

अरेश्च विजिगीषोश्च मध्यमो भूम्यनन्तरः ।
अनुग्रहे संहतयोर्व्यस्तयोर्निग्रहे प्रभुः ॥१८॥

IAST

Areśca vijigīṣośca madhyamo bhūmyanantaraḥ |
Anugrahe saṃhatayorvyastayornigrahe prabhuḥ ||18||

शब्दार्थ

- अरेश्च – शत्रु (अरि) के
- विजिगीषोः – विजय-इच्छुक राजा के
- मध्यमः – मध्यम राजा (बीच में स्थित)
- भूम्यनन्तरः – भूमि-अनन्तर (सीमा-समीप/पड़ोसी भूमि वाला)
- अनुग्रहे – अनुग्रह/सहायता करने में
- संहतयोः – संहत (संयुक्त/एकत्रित) (शत्रु-मित्रों) की
- व्यस्तयोः – व्यस्त (अलग-अलग/विभक्त) की
- निग्रहे – निग्रह/दमन/नियन्त्रण करने में
- प्रभुः – प्रभु/समर्थ होता है ।

भावार्थ

अरि (शत्रु) और विजिगीषु (विजय-इच्छुक राजा) – इन दोनों के मध्य में स्थित, जिसकी भूमि दोनों से समीप (भूम्यनन्तरः) है, वह 'मध्यम' राजा कहलाता है। वह जब विजिगीषु और अरि संयुक्त (संहत) होते हैं, तो उनका अनुग्रह (सहायता) करता है; और जब वे विभक्त (व्यस्त) होते हैं, तो उनका निग्रह (दमन/नियन्त्रण) कर सकता है। मध्यम राजा अपनी स्थिति का लाभ उठाकर दोनों पर प्रभुत्व स्थापित करता है।

दार्शनिक विवेचन

'मध्यम' – यह 'अर्थशास्त्र' का अत्यन्त सूक्ष्म सिद्धान्त है। जो राजा 'अरि' एवं 'विजिगीषु' के बीच स्थित है, वह 'मध्यम' कहलाता है – वह न तो प्रत्यक्ष मित्र है, न शत्रु; वह अवसरवादी (Opportunistic) होता है। 'संहतयोः अनुग्रहे' – जब शक्तिशाली विजिगीषु एवं अरि आपस में मिल जाते हैं (गठबन्धन), तो मध्यम उनकी सहायता करके अपनी सुरक्षा करता है। 'व्यस्तयोः निग्रहे' – जब वे आपस में लड़ रहे होते हैं, तो मध्यम उन दोनों को दबा सकता है। यह 'संतुलन-नीति' (Balance of Power) का उत्कृष्ट रूप है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'बफर-स्टेट' (Buffer State) या 'तटस्थ-राष्ट्र' (जैसे स्विट्जरलैण्ड/भूटान) – यह 'मध्यम' राजा का आधुनिक रूप है। जब दो महाशक्तियाँ (विजिगीषु एवं अरि) संघर्षरत होती हैं, तो बफर-राज्य अपने स्थान का लाभ उठाकर दोनों से लाभ लेता है (अनुग्रह) एवं कूटनीति से अपनी सुरक्षा बनाए रखता है।

श्लोक १९ (उदासीन राजा – मण्डल के बाहर)

श्लोक

मण्डलाद्बहिरेतेषामुदासीनो बलाधिकः ।
अनुग्रहे संहतानां व्यस्तानां च वधे प्रभुः ॥१९॥

IAST

Maṇḍalādbahireteṣāmudāsīno balādhikaḥ |
Anugrahe saṃhatānāṃ vyastānāṃ ca vadhe prabhuḥ ||19||

शब्दार्थ
• मण्डलात् – मण्डल (इस राज्य-चक्र) से
• बहिः – बाहर
• एतेषाम् – इन (अरि, मित्र, मध्यम आदि) से
• उदासीनः – उदासीन राजा
• बलाधिकः – बल में अधिक/शक्तिशाली
• अनुग्रहे – अनुग्रह/सहायता करने में
• संहतानाम् – संहत (संयुक्त) राज्यों की
• व्यस्तानाम् – व्यस्त (अलग-अलग) राज्यों की
• वधे – वध/नाश/पराजय में
• प्रभुः – प्रभु/समर्थ होता है ।

भावार्थ
इस सम्पूर्ण मण्डल (अरि, मित्र, मध्यम आदि) से बाहर स्थित, जो बल (सेना/समृद्धि) में इन सबसे अधिक (बलाधिकः) है, वह 'उदासीन' राजा कहलाता है। वह जब ये सभी संयुक्त (संहतानाम्) होते हैं, तो उनका अनुग्रह (सहायता) करता है; और जब ये परस्पर विभक्त (व्यस्तानाम्) होते हैं, तो उनका वध (पराजय/नाश) करने में समर्थ होता है। उदासीन स्वयं को सर्वोपरि बनाए रखता है।

दार्शनिक विवेचन

'उदासीन' – 'मण्डल' के बाहर स्थित, किन्तु सबसे शक्तिशाली (बलाधिकः) – यह 'चक्रवर्ती' (सम्राट) की दिशा में अग्रसर राज्य है। यह 'अरि', 'मित्र', एवं 'मध्यम' – तीनों से परे है। 'संहतानाम् अनुग्रहे' – जब सब एकजुट होते हैं, तो उदासीन उनका सहायक बनकर अपना प्रभाव बढ़ाता है। 'व्यस्तानाम् वधे' – जब वे आपस में कलह करते हैं, तो उदासीन उन सबको नष्ट कर सकता है। यह 'महाशक्ति-संतुलन' (Superpower hegemony) का सिद्धान्त है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'सुपरपावर' (जैसे अमेरिका/चीन) – यह 'उदासीन' (क्षेत्रीय मण्डल से बाहर परन्तु अत्यधिक शक्तिशाली) की भूमिका निभाता है। जब क्षेत्रीय-शक्तियाँ (संहत) सहयोग करती हैं, तो वह उनका अनुग्रह (सहायता) करता है; जब वे आपस में लड़ती हैं (व्यस्त), तो वह उन्हें नियन्त्रित/पराजित (वध) करके अपनी सत्ता स्थापित करता है – जैसे खाड़ी-युद्ध या यूक्रेन-रूस संकट में अमेरिका की भूमिका।

श्लोक २० (चतुष्क-मण्डल -- मूलप्रकृतियाँ)

श्लोक

मूलप्रकृतयस्त्वेताश्चतस्रः परिकीर्तिताः ।
आहैव मन्त्रकुशलश्चतुष्कं मण्डलं मतः ॥२०॥

IAST

Mūlaprakṛtayastvetāścatasraḥ parikīrtitāḥ |

Āhaiva mantrakuśalaścatuṣkaṃ maṇḍalaṃ mataḥ ||20||

शब्दार्थ

• मूलप्रकृतयः - मूल-प्रकृतियाँ (आधार-भूत अंग)
• एताः - ये (पूर्वोक्त)
• चतस्रः - चार
• परिकीर्तिताः - कही गयी हैं
• आह - कहा/बताया
• एव - ही
• मन्त्रकुशलः - मन्त्र-कुशल (नीति-विद्या-विशारद)
• चतुष्कम् - चतुष्क (चार-अंगी)
• मण्डलम् - मण्डल (राज्य-चक्र)
• मतः - इस प्रकार माना गया है ।

भावार्थ
ये पूर्वोक्त चार (अरि, मित्र, मध्यम, उदासीन) – मण्डल की 'मूलप्रकृतियाँ' (आधारभूत अंग) कही गयी हैं। नीति-विशारद (मन्त्रकुशल) ने इस चार-अंगी मण्डल (चतुष्क) को ही (आहैव) 'मण्डल' (राज्य-चक्र) माना है – अर्थात् मण्डल-सिद्धान्त का सार इन चारों में समाहित है। यह सम्पूर्ण मण्डल-प्रकरण का निष्कर्ष-बिन्दु है।

दार्शनिक विवेचन

'मूलप्रकृतयः' – ये चार (अरि, मित्र, मध्यम, उदासीन) मण्डल-चक्र के 'आधार-स्तम्भ' (Fundamental constituents) हैं। 'मन्त्रकुशलः' – यहाँ मन्त्र का अर्थ 'राज-नीति' (Counsel) है – जो इन चारों के परस्पर-सम्बन्धों को समझता है, वही वास्तविक 'मन्त्री' है। 'चतुष्कं मण्डलम्' – यह अर्थशास्त्र का 'चक्र-रूप' (Circle) है, जिसमें प्रत्येक अंग अपने से आगे/पीछे के अंग से जुड़ा होता है। यह 'राज-कूटनीति' का बीज-गणित (Matrix) है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'अन्तर्राष्ट्रीय-सम्बन्धों का सिद्धान्त' (International Relations Theory) – जिसे 'बैलेंस ऑफ पावर' या 'गठबन्धन-सिद्धान्त' कहा जाता है – इसी 'चतुष्क-मण्डल' पर आधारित है। किसी भी राष्ट्र (विजिगीषु) के लिए उसके 'शत्रु, मित्र, शत्रु-मित्र, तटस्थ-बलवान' – इन चारों की पहचान एवं विश्लेषण ही सफल 'विदेश-नीति' (Foreign Policy) का आधार है।

श्लोक २१ (पुलोम-इन्द्र-मत – षट्-राजक-मण्डल)

श्लोक

विजिगीषुररिर्मित्रं पार्ष्णिग्राहोऽथ मध्यमः ।
उदासीनः पुलोमेन्द्रौ मण्डलं षट्कमूचतुः ॥२१॥

IAST

Vijigīṣur arir mitraṃ pārṣṇigrāho'tha madhyamaḥ |
Udāsīnaḥ pulomendrau maṇḍalaṃ ṣaṭkamūcatuḥ ||21||

शब्दार्थ
• विजिगीषुः – विजयेच्छु राजा (स्वयं)
• अरिः – शत्रु
• मित्रम् – मित्र/सहायक
• पार्ष्णिग्राहः – पार्ष्णिग्राह (पीछे से आघात करने वाला)
• अथ – तथा

• मध्यमः – मध्यम राजा
• उदासीनः – उदासीन राजा
• पुलोमेन्द्रौ – पुलोमा एवं इन्द्र (दोनों आचार्य/देवता)
• मण्डलम् – मण्डल
• षट्कम् – छः (राजाओं वाला)
• ऊचतुः – कहा/बताया (दोनों ने) ।

भावार्थ

पुलोमा और इन्द्र (दोनों आचार्यों/देवगुरुओं) ने मण्डल को छः (षट्कम्) राजाओं वाला बताया है – (१) विजिगीषु (स्वयं), (२) अरि (शत्रु), (३) मित्र (सहायक), (४) पार्ष्णिग्राह (पिछला-शत्रु), (५) मध्यम (मध्यस्थ), तथा (६) उदासीन (तटस्थ-शक्तिशाली)। यह मण्डल-चक्र का मूलभूत विस्तार है।

दार्शनिक विवेचन

'पुलोमेन्द्रौ' – पुलोमा (एक ऋषि/दैत्यगुरु) एवं इन्द्र (देवराज) – दोनों के मत की समानता दर्शाती है कि यह षट्क-विभाजन सार्वभौमिक है। इसमें 'अरि' (अग्र-शत्रु) एवं 'पार्ष्णिग्राह' (पश्च-शत्रु) – दोनों शत्रु-पक्ष; 'मित्र' एवं 'मध्यम' – दो सहायक-संभावी; तथा 'उदासीन' – सर्वोपरि-तटस्थ। यह 'द्विमुखी-रणनीति' (Two-front strategy) का आधार है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक सुरक्षा-विश्लेषण में 'दो-मोर्चे का खतरा' (Two-front threat) – अग्र-शत्रु (अरि) एवं पश्च-शत्रु (पार्ष्णिग्राह) – तथा 'क्षेत्रीय-शक्तियाँ' (मध्यम/उदासीन) – इन छः का विश्लेषण किसी भी राष्ट्र की 'रक्षा-रणनीति' (Defense strategy) का आधार है।

श्लोक २२ (उशना-मत – द्वादश-राजक-मण्डल)

श्लोक

उदासीनो मध्यमश्च विजिगीषोश्च मण्डलम् ।
उशना मण्डलमिदं प्राह द्वादशराजकम् ॥२२॥

IAST

Udāsīno madhyamaśca vijigīṣośca maṇḍalam |
Uśanā maṇḍalamidaṃ prāha dvādaśarājakam ||22||

शब्दार्थ

• उदासीनः – उदासीन राजा
• मध्यमः – मध्यम राजा

- च – तथा
- विजिगीषोः – विजयेच्छु राजा का
- मण्डलम् – मण्डल
- उशना – उशना/शुक्राचार्य (दैत्यगुरु)
- मण्डलम् – मण्डल
- इदम् – यह
- प्राह – कहा
- द्वादशराजकम् – बारह राजाओं वाला ।

भावार्थ

उशना (शुक्राचार्य) ने इस मण्डल को 'द्वादश-राजक' (बारह राजाओं वाला) कहा है – इसमें विजिगीषु के स्वयं के मण्डल (स्वयं, अरि, मित्र, पार्ष्णिग्राह) तथा उदासीन एवं मध्यम के अपने-अपने मण्डल (प्रत्येक के चार-चार) – इस प्रकार कुल बारह राजा होते हैं। यह मण्डल का त्रि-स्तरीय विस्तार है।

दार्शनिक विवेचन

'उशना' (शुक्र) – दैत्यगुरु, जो 'बृहस्पति' (देवगुरु) के समकक्ष हैं। उनका यह 'द्वादश-राजक' सिद्धान्त 'त्रि-मण्डल-संयोग' (Combination of three circles) है – विजिगीषु का मण्डल (४), मध्यम का मण्डल (४), उदासीन का मण्डल (४) – कुल १२। यह 'अन्तर्राष्ट्रीय-गठबन्धन-गणित' (Alliance arithmetic) का प्राचीन रूप है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'गठबन्धन-राजनीति' – किसी देश (विजिगीषु) के सहयोगी (मित्र), उसके सहयोगी के सहयोगी, तटस्थ-शक्ति (उदासीन) के सहयोगी – इस प्रकार ४+४+४ = १२ देशों का एक 'प्रभाव-चक्र' (Sphere of influence) बनता है, जैसे कि क्वाड/ब्रिक्स/नाटो विस्तार।

श्लोक २३ (महर्षि-मत – षट्त्रिंशत्क)

श्लोक

द्वादशानां नरेन्द्राणाम् अरिमित्रे पृथक् पृथक् ।
षट्त्रिंशत्कमिति प्राहुस् ते च ते च महर्षयः ॥२३॥

IAST

Dvādaśānāṃ narendrāṇām arimitre pṛthak pṛthak |
Ṣaṭtriṃśatkamiti prāhus te ca te ca maharṣayaḥ ||23||

शब्दार्थ

- द्वादशानाम् – बारह
- नरेन्द्राणाम् – राजाओं के
- अरिमित्रे – शत्रु एवं मित्र (दोनों)
- पृथक् पृथक् – अलग-अलग
- षट्त्रिंशत्कम् – छत्तीस (संख्या)
- इति – इस प्रकार
- प्राहुः – कहा
- ते च ते च – वे तथा वे (विभिन्न)
- महर्षयः – महर्षिगण ने ।

भावार्थ

बारह राजाओं (द्वादशानाम्) में से प्रत्येक के लिए 'शत्रु' (अरि) एवं 'मित्र' (मित्र) को अलग-अलग (पृथक् पृथक्) गिनने पर – प्रत्येक राजा के स्वयं, उसका शत्रु, उसका मित्र – इस प्रकार १२ x ३ = ३६ (षट्त्रिंशत्कम्) – यह मण्डल-संख्या महर्षियों ने कही है।

दार्शनिक विवेचन

'अरिमित्रे पृथक् पृथक्' – अर्थात् प्रत्येक राजा का अपना 'मूल-स्वरूप', उसका 'शत्रु' (अरि) एवं 'मित्र' – तीन-तीन करके १२ x ३ = ३६। यह 'सम्बन्ध-त्रय' (Self, Friend, Foe) का 'गुणन-सिद्धान्त' (Multiplicative principle) है। यह 'ऋषि-परम्परा' (महर्षयः) का 'गणितीय-मण्डल' (Mathematical mandala) है, जो प्रत्येक राज्य के पारस्परिक-सम्बन्धों को संख्याबद्ध करता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'अन्तर्राष्ट्रीय-सम्बन्धों का नेटवर्क-विश्लेषण' (Network Analysis) – १२ देशों में प्रत्येक के 'स्वयं, मित्र, शत्रु' – कुल ३६ नोड्स (nodes) का एक 'संघर्ष-सहयोग-ग्रिड' (Conflict-Cooperation Grid) बनता है, जिसका उपयोग 'सिमुलेशन-मॉडल' (Simulation models) में किया जाता है।

श्लोक २४ (प्रत्येक राजा की पाँच प्रकृतियाँ)

श्लोक

द्वादशानां नरेन्द्राणां पञ्च पञ्च पृथक् पृथक् ।
अमात्याद्याश्च प्रकृतीरामनन्तीह मानवाः ॥२४॥

IAST

Dvādaśānāṃ narendrāṇāṃ pañca pañca pṛthak pṛthak |
Amātyādyāśca prakṛtīr āmanantīha mānavāḥ ||24||

शब्दार्थ

- द्वादशानाम् – बारह
- नरेन्द्राणाम् – राजाओं की
- पञ्च पञ्च – पाँच-पाँच
- पृथक् पृथक् – अलग-अलग
- अमात्याद्याः – अमात्य (मंत्री) आदि (प्रकृतियाँ)
- च – तथा
- प्रकृतीः – प्रकृतियों/राज्य-अंगों को
- आमनन्ति – कहते/मानते हैं
- इह – इस लोक में
- मानवाः – मानव/विद्वान् ।

भावार्थ

बारह राजाओं (द्वादशानाम्) में से प्रत्येक की पाँच-पाँच (पञ्च पञ्च) प्रकृतियाँ (राज्य-अंग) हैं – अमात्य (मंत्री), राष्ट्र, दुर्ग, कोश, दण्ड – इन्हें विद्वान् (मानवाः) इस लोक में प्रकृतियाँ कहते हैं। (यह पूर्वोक्त सप्त-प्रकृतियों में से पाँच 'स्थायी-अंग' हैं, मित्र एवं स्वामी को छोड़कर)।

दार्शनिक विवेचन

'पञ्च पञ्च' – प्रत्येक राजा (राष्ट्र) की ५ आन्तरिक-प्रकृतियाँ (Amātya, Rāṣṭra, Durga, Kośa, Daṇḍa) होती हैं। १२ राजाओं के लिए १२ x ५ = ६० प्रकृतियाँ बनती हैं। यह 'अर्थशास्त्र' का 'प्रकृति-विभाजन' है, जो प्रत्येक राज्य की आन्तरिक-क्षमता (Internal capacity) को मापता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'राष्ट्रीय-सामर्थ्य-सूचकांक' (National Power Index) – १२ देशों में प्रत्येक की ५ क्षमताएँ (प्रशासन, जनसंख्या/भूभाग, अवसंरचना, अर्थव्यवस्था, सैन्य-बल) – इन ६० सूचकांकों (Indicators) का विश्लेषण ही 'तुलनात्मक-राजनीति' (Comparative Politics) का आधार है।

श्लोक २५ (द्व्यधिक-सप्तति – ७२ प्रकृतियाँ)

श्लोक

मौला द्वादश चैवैता अमात्याद्यास्तथा च याः ।
सप्ततिर्द्व्यधिका ह्येषां सर्वप्रकृतिमण्डलम् ॥२५॥

IAST

Maulā dvādaśa caivaitā amātyādyāstathā ca yāḥ |
Saptatir dvyadhikā hy eṣāṃ sarvaprakṛtimaṇḍalam ||25||

शब्दार्थ

- मौला – मौला (मूल/स्वदेशी/प्रधान) राजा
- द्वादश – बारह
- च – तथा
- एव – ही
- एताः – ये (बारह राजा)
- अमात्याद्याः – अमात्य (मंत्री) आदि (प्रकृतियाँ)
- तथा – तथा
- याः – जो (प्रकृतियाँ हैं)
- सप्ततिः – सत्तर
- द्व्यधिका – दो अधिक (अर्थात् ७०+२ = ७२)
- हि – निश्चय ही
- एषाम् – इन (बारह राजाओं) की
- सर्वप्रकृतिमण्डलम् – सभी प्रकृतियों का मण्डल/समूह है ।

भावार्थ

ये बारह मौला (मूल/प्रधान) राजा, तथा उनकी अमात्य-आदि (पाँच) प्रकृतियाँ – इस प्रकार कुल १२ (राजा) + १२ x ५ (प्रकृतियाँ) = १२ + ६० = ७२ – यह (सप्ततिर्द्व्यधिका – ७०+२) इन सबका 'सर्वप्रकृतिमण्डल' (समग्र-प्रकृतियों का मण्डल) कहलाता है।

दार्शनिक विवेचन

यहाँ 'मौला' (मूल-राजा) एवं 'प्रकृतियाँ' (अमात्यादि) – दोनों को मिलाकर ७२ संख्याएँ बनती हैं। १२ (राजा) + ६० (प्रकृतियाँ) = ७२। यह 'गणितीय-पूर्णता' (Mathematical completeness) का प्रतीक है – जैसे वैदिक-काल में ७२ 'कला' (Arts) या ७२ 'नाड़ियाँ' (Yoga) – यह संख्या 'व्यवस्थित-जगत्' (Ordered Universe) का सूचक है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'वैश्विक-शासन-सूचकांक' (Global Governance Index) – १२ प्रमुख देशों एवं उनकी ५-५ उप-प्रणालियों (उप-सूचकांकों) को मिलाकर ७२ सूचकांक-बिन्दुओं (Indicators) पर किसी भी क्षेत्रीय-संतुलन (Regional balance) का विश्लेषण किया जाता है – यही इस श्लोक का आधुनिक प्रयोग है।

श्लोक २६ (अष्टादश-राजक – आचार्य-मत)

श्लोक

संयुक्तस्त्वरिमित्राभ्यामुभयारिस्तथा सुहृत् ।
मौला द्वादश राजान इत्यष्टादशकं गुरुः ॥२६॥

IAST

Saṃyuktastvarimitrābhyāmubhayāristathā suhṛt |
Maulā dvādaśa rājāna ity aṣṭādaśakaṃ guruḥ ||26||

शब्दार्थ

- संयुक्तः – (स्वयं विजिगीषु) संयुक्त/सहित
- अरिमित्राभ्याम् – शत्रु एवं मित्र (दोनों) के साथ
- उभयारिः – उभय-अरि (दोनों/सबका शत्रु / सार्वजनिक-शत्रु)
- तथा – तथा
- सुहृत् – सुहृद्/शुभचिन्तक/सौहार्दपूर्ण-सहायक
- मौला – मौला (मूल) राजा
- द्वादश – बारह
- राजानः – राजा
- अष्टादशकम् – अठारह (संख्या)
- गुरुः – गुरु/आचार्य (बृहस्पति आदि) ने कहा ।

भावार्थ

(बृहस्पति आदि) गुरु ने अठारह (अष्टादशकम्) राजाओं वाला मण्डल बताया है – बारह मौला (मूल) राजा, तथा उनके साथ (संयुक्त) अरि, मित्र, उभय-अरि (सार्वजनिक-शत्रु), एवं सुहृत् (सौहार्दी-सहायक) – इस प्रकार १२ + ६ = १८। यह मण्डल का और विस्तार है।

दार्शनिक विवेचन

'अरिमित्राभ्याम्' – प्रत्येक राजा का अपना विशिष्ट शत्रु/मित्र, 'उभयारिः' – जो सबका शत्रु हो (सार्वजनिक-विरोधी), 'सुहृत्' – जो सबका मित्र हो (तटस्थ-हितैषी) – इन चार 'विशेष-पदों' को बारह मूल-राजाओं में

जोड़कर १८ किए गए। यह 'सार्वजनिक-मित्र/शत्रु' (Common enemy/friend) की अवधारणा है, जो आधुनिक 'वैश्विक-सहयोग/संघर्ष' का आधार है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'संयुक्त-राष्ट्र सुरक्षा-परिषद्' (UNSC) – १५ सदस्य (मूल) तथा 'उभयारि' (आतंकवाद) एवं 'सुहृत्' (मानवीय-सहायता-संगठन) – इस प्रकार १५+? किन्तु सिद्धान्ततः १८ 'अभिनेता' (Actors) – १२ क्षेत्रीय-शक्तियाँ + ६ वैश्विक-अभिनेता (संयुक्त-राष्ट्र, विश्व-बैंक आदि) – यह 'बहु-ध्रुवीय-विश्व' (Multipolar world) का प्राचीन गणित है।

श्लोक २७ (अष्टोत्तर-शत – १०८)

श्लोक

अष्टादशानामेतेषाममात्याद्याः पृथक् पृथक् ।
अष्टोत्तरशतं ह्येतन्मण्डलं कवयो विदुः ॥२७॥

IAST

Aṣṭādaśānāmeteṣāmamātyādyāḥ pṛthak pṛthak |
Aṣṭottaraśataṃ hy etan maṇḍalaṃ kavayo viduḥ ||27||

शब्दार्थ

- अष्टादशानाम् – अठारह (राजाओं) की
- एतेषाम् – इन (पूर्वोक्त) की
- अमात्याद्याः – अमात्य (मंत्री) आदि प्रकृतियाँ
- पृथक् पृथक् – अलग-अलग
- अष्टोत्तरशतम् – अष्ट-उत्तर-शत = १००+८ = १०८
- एतत् – यह
- मण्डलम् – मण्डल
- कवयः – कवि/मनीषी/विद्वान्
- विदुः – जानते/मानते हैं ।

भावार्थ

इन अठारह राजाओं (अष्टादशानाम्) में से प्रत्येक की अमात्य-आदि (पाँच) प्रकृतियाँ अलग-अलग (पृथक् पृथक्) गिनने पर – १८ x ६ (राजा सहित ६ अंग?) अथवा १८ + (१८ x ५) = १८ + ९० = १०८ – इस प्रकार कवि/मनीषी (कवयः) इस मण्डल को 'अष्टोत्तरशत' (१०८) मानते हैं।

दार्शनिक विवेचन

१०८ – यह संख्या भारतीय-दर्शन में अत्यन्त पवित्र है (जप-माला, ग्रह-गोचर आदि)। यहाँ १८ राजाओं में प्रत्येक की ६ प्रकृतियाँ (स्वामी सहित अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, कोश, दण्ड, मित्र?) – १८ x ६ = १०८। यह 'राज्य-व्यवस्था' की 'पूर्ण-संख्यात्मक-आकृति' (Complete numerical figure) है, जो कवियों/मनीषियों (कवयः) की 'व्यवस्थित-दृष्टि' को दर्शाती है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'अन्तर्राष्ट्रीय-सम्बन्धों के मॉडल' (IR Models) – १८ प्रमुख देशों (G20 में से १८) एवं उनकी ६-६ आन्तरिक-क्षमताओं (सैन्य, आर्थिक, राजनयिक आदि) का विश्लेषण करने पर १०८ 'सूचक-बिन्दु' (Data points) बनते हैं, जिनका उपयोग 'शक्ति-संतुलन' (Balance of Power) के पूर्वानुमान में किया जाता है।

श्लोक २८ (विशालाक्ष-मत – चतुष्पञ्चाशत्क)

श्लोक

एतेऽष्टादश चैतेषां शत्रुमित्रे पृथक् पृथक् ।
चतुष्पञ्चाशत्कमिति विशालाक्षः प्रभाषते ॥२८॥

IAST

Ete'ṣṭādaśa caiteṣāṃ śatrumitre pṛthak pṛthak |
Catuṣpañcāśatkam iti viśālākṣaḥ prabhāṣate ||28||

शब्दार्थ
• एते – ये
• अष्टादश – अठारह
• एतेषाम् – इन (अठारह राजाओं) के
• शत्रुमित्रे – शत्रु एवं मित्र (दोनों)
• पृथक् पृथक् – अलग-अलग
• चतुष्पञ्चाशत्कम् – चतुः+पञ्चाशत् = ५४ (चौवन)
• इति – इस प्रकार
• विशालाक्षः – विशालाक्ष (एक ऋषि/आचार्य)
• प्रभाषते – कहते हैं ।

भावार्थ
इन अठारह राजाओं (एतेषाम्) के शत्रु एवं मित्र (शत्रुमित्रे) को अलग-अलग (पृथक् पृथक्) गिनने पर –

प्रत्येक राजा के स्वयं, शत्रु, मित्र – १८ x ३ = ५४ (चतुष्पञ्चाशत्कम्) – यह मण्डल-संख्या विशालाक्ष (आचार्य) कहते हैं।

दार्शनिक विवेचन

'विशालाक्षः' – एक प्राचीन ऋषि/आचार्य, जिन्होंने मण्डल-सिद्धान्त को और गहनता दी। १८ x ३ (स्व+शत्रु+मित्र) = ५४। यह 'प्रत्येक-राजा-त्रिधा-सम्बन्ध' (Triadic relationship of each king) का सिद्धान्त है, जो 'बहु-ध्रुवीय-संघर्ष' (Multi-polar conflict) का गणितीय-आधार है। 'विशालाक्ष' – जिनकी दृष्टि 'विशाल' (व्यापक) है – वे सम्पूर्ण-मण्डल को ५४ कोणों (angles) से देखते हैं।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'बहु-पक्षीय-कूटनीति' (Multilateral diplomacy) – १८ प्रमुख देशों में प्रत्येक के 'स्वयं, उसके सहयोगी, उसके विरोधी' – ५४ 'पक्ष-सम्बन्धों' (Bilateral/Trilateral relations) का विश्लेषण, जैसे कि 'संयुक्त-राष्ट्र महासभा' के ५४ प्रमुख-मतदान-समूह (Voting blocs)।

श्लोक २९ (त्रिशत-चतुर्विंशति – ३२४)

श्लोक

चतुष्पञ्चाशतो राज्ञाम् अमात्याद्याः पृथक् पृथक् ।
सचतुर्विंशतीदं हि मण्डलं त्रिशतं मतम् ॥२९॥

IAST

Catuṣpañcāśato rājñām amātyādyāḥ pṛthak pṛthak |
Sacaturviṃśatīdaṃ hi maṇḍalaṃ triśataṃ matam ||29||

शब्दार्थ

- चतुष्पञ्चाशतः – ५४ राजाओं (राज्ञाम्) की
- अमात्याद्याः – अमात्य (मंत्री) आदि प्रकृतियाँ
- पृथक् पृथक् – अलग-अलग
- सचतुर्विंशती – 'स' (सहित) + चतुर्विंशति (२४) – अर्थात् ३०० + २४ = ३२४
- इदम् – यह
- मण्डलम् – मण्डल
- त्रिशतम् – तीन सौ (अर्थात् ३००)
- मतम् – माना गया है (३०० के साथ २४ अधिक = ३२४) ।

भावार्थ

५४ राजाओं (चतुष्पञ्चाशतः) में से प्रत्येक की अमात्य-आदि (पाँच) प्रकृतियाँ अलग-अलग (पृथक् पृथक्)

गिनने पर – (५४ x ६ = ३२४) – यह ३२४-संख्या वाला मण्डल (सचतुर्विंशति = ३००+२४) 'त्रिशतं मतम्' (तीन सौ एवं चौबीस) कहा गया है। यह मण्डल-विस्तार का अत्यन्त सूक्ष्म-गणितीय चरम है।

दार्शनिक विवेचन

'त्रिशतं मतम्' – यहाँ 'त्रिशत' का अर्थ ३०० है, परन्तु 'सचतुर्विंशती' (सहित चौबीस) से ३२४ बनता है। यह 'अंक-गणितीय-पूर्णता' (Arithmetical completeness) का प्रतीक है। ५४ राजाओं में प्रत्येक की ६ प्रकृतियाँ (स्वयं सहित ५) – ५४ x ६ = ३२४। यह 'राज्य-शक्ति-संख्यात्मक-माप' (Quantitative measurement of state power) का उत्कृष्ट उदाहरण है, जो 'व्यवहारवादी-राजनीति-शास्त्र' (Behavioural politics) के समान है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'वैश्विक-प्रतिस्पर्धात्मकता-सूचकांक' (Global Competitiveness Index) – ५४ प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं (Economies) की ६-६ मापदण्डों (संस्थान, अवसंरचना, मैक्रो-अर्थव्यवस्था, स्वास्थ्य, शिक्षा, बाजार-क्षमता) पर ३२४ सूचक-बिन्दुओं (Indicators) का विश्लेषण – इसी 'त्रिशत-चतुर्विंशति-मण्डल' (३२४-point matrix) का आधुनिक रूप है।

श्लोक ३० (चतुर्दशक – मूल-मण्डल)

श्लोक

सप्तप्रकृतिकं यत्तु विजिगीषोररेश्च तत् ।
चतुर्दशकमेवेह मण्डलं परिचक्षते ॥३०॥

IAST

Saptaprakṛtikaṃ yattu vijigīṣorareśca tat |
Caturdaśakameveha maṇḍalaṃ paricakṣate ||30||

शब्दार्थ

- सप्तप्रकृतिकम् – सात-प्रकृतियों (अंगों) वाला
- यत् – जो
- विजिगीषोः – विजयेच्छु राजा का
- अरेश्च – एवं शत्रु (अरि) का
- तत् – वह
- चतुर्दशकम् – चौदह (संख्या)
- एव – ही
- इह – इस (लोक/शास्त्र) में

• मण्डलम् – मण्डल
• परिचक्षते – कहा/वर्णित किया जाता है ।

भावार्थ
विजिगीषु (विजयेच्छु) राजा की सात प्रकृतियाँ (सप्तप्रकृतिकम्) तथा उसके शत्रु (अरि) की भी सात प्रकृतियाँ – इस प्रकार दोनों के सम्मिलित (चतुर्दशकम् – ७+७=१४) मण्डल को ही (इह) मूल-मण्डल (मण्डलं परिचक्षते) कहा जाता है। यही मण्डल-सिद्धान्त का **आधारभूत एवं सार-रूप (मूल)** स्वरूप है।

दार्शनिक विवेचन

यह सम्पूर्ण 'मण्डल-प्रकरण' का **निष्कर्ष-बिन्दु** (Concluding thesis) है – 'विजिगीषु' एवं 'अरि' – इन दो मूल-प्रतिस्पर्धियों की ७-७ प्रकृतियाँ (क्रमशः स्वामी, अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, कोश, दण्ड, मित्र) मिलकर १४ (चतुर्दशकम्) बनती हैं। शेष सभी विस्तार (३६, ५४, ७२, १०८, ३२४) इसी १४ के 'पारस्परिक-सम्बन्धों' (Inter-relationships) के आधार पर उत्पन्न होते हैं। यह 'अर्थशास्त्र' का 'शक्ति-संतुलन-समीकरण' (Power-balance equation) है – दो मूल-प्रतिद्वन्द्वियों (Vijigīṣu & Ari) की समग्र-क्षमताओं का आपसी-माप ही 'मण्डल' का वास्तविक-स्वरूप है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'शीत-युद्ध-कालीन द्वि-ध्रुवीयता' (Bipolarity) – अमेरिका (विजिगीषु) एवं सोवियत-संघ (अरि) – दोनों की ७-७ क्षमताएँ (सैन्य, आर्थिक, राजनयिक, सांस्कृतिक, वैचारिक, तकनीकी, गुप्तचर) – कुल १४ 'शक्ति-आधार' (Power-bases) – इसी १४-बिन्दु (१४-point) पर शीत-युद्ध का सम्पूर्ण 'मण्डल' (वारसॉ-नाटो) संचालित था। यही 'स्ट्रैटेजिक-पावर-मैट्रिक्स' (Strategic Power Matrix) आज के 'बहु-ध्रुवीय-विश्व' (Multipolar world) का भी आधार है।

श्लोक ३१ (त्रिक-षट्क – विजिगीषु-अरि-मध्यम एवं मित्र-सहित)

श्लोक

मण्डलं त्रिकमित्याहुर्विजिगीष्वरिमध्यमाः ।
मित्रयुक्ताः पृथक् चैते षट्कमित्यपरे जगुः ॥३१॥

IAST

Maṇḍalaṃ trikamityāhurvijigīṣvarimadhyamāḥ |
Mitrayuktāḥ pṛthak caite ṣaṭkamityapare juguḥ ||31||

शब्दार्थ
• मण्डलम् – मण्डल/राज्य-चक्र

• त्रिकम् – त्रिक (तीन)
• आहुः – कहते हैं
• विजिगीषु – विजय-इच्छुक
• अरि – शत्रु
• मध्यमाः – मध्यम राजा
• मित्रयुक्ताः – मित्र (सहायक) से युक्त
• पृथक् – अलग-अलग
• एते – ये (तीनों)
• षट्कम् – षट्क (छः)
• अपरे – अन्य (आचार्य)
• जगुः – कहते हैं ।

भावार्थ
कुछ आचार्य मण्डल को **त्रिक** (तीन – विजिगीषु, अरि, मध्यम) कहते हैं; तथा अन्य आचार्य इन तीनों में से प्रत्येक के साथ **पृथक्-पृथक् मित्र** (सहायक) जोड़कर **षट्क** (छः) कहते हैं।

दार्शनिक विवेचन

यह मण्डल-सिद्धान्त में 'न्यूनतम' (त्रिक) एवं 'विस्तारित' (षट्क) – दोनों दृष्टियाँ दिखाता है। 'त्रिक' मूल-प्रतिस्पर्धा (शत्रु-मध्यस्थ-स्वयं) है, जबकि 'षट्क' में प्रत्येक का 'सहायक' (मित्र) भी जुड़ जाता है, जिससे 'गठबन्धन-गणित' (Alliance arithmetic) स्पष्ट होता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'क्षेत्रीय-संघर्ष' (Regional conflict) – भारत-पाक-चीन (त्रिक) बनाम क्रमशः अमेरिका-तुर्की-रूस (मित्र-युक्त षट्क) – आधुनिक भू-राजनीति इसी 'त्रिक-षट्क' विस्तार पर कार्य करती है।

श्लोक ३२ (एक राजा की ६ प्रकृतियाँ -३६)

श्लोक

अमात्याद्याः प्रकृतय एकैकस्यैव भूपतेः ।
मण्डलं मण्डलविदः षट्त्रिंशत्कं प्रचक्षते ॥३२॥

IAST

Amātyādyāḥ prakṛtaya ekaikasyaiva bhūpateḥ |

Maṇḍalaṃ maṇḍalavidaḥ ṣaṭtriṃśatkaṃ pracakṣate ||32||

शब्दार्थ

- अमात्याद्याः - अमात्य (मंत्री) आदि (प्रकृतियाँ)
- प्रकृतयः - राज्य-अंग
- एकैकस्य - प्रत्येक
- एव - ही
- भूपतेः - राजा की
- मण्डलम् - मण्डल
- मण्डलविदः - मण्डल-वेत्ता/विशेषज्ञ
- षट्त्रिंशत्कम् - छत्तीस (संख्या)
- प्रचक्षते - कहते हैं ।

भावार्थ

मण्डल-विशेषज्ञ प्रत्येक राजा की **अमात्य-आदि (६) प्रकृतियों** (स्वामी सहित पाँच आन्तरिक-अंग) को मण्डल मानते हैं। ६ राजाओं (विजिगीषु, अरि, मित्र, पार्ष्णिग्राह, मध्यम, उदासीन) में प्रत्येक की ६ प्रकृतियाँ – ६ x ६ = **३६ (षट्त्रिंशत्कम्)** । यह मण्डल का सूक्ष्म-आन्तरिक-विश्लेषण है।

दार्शनिक विवेचन

'एकैकस्य भूपतेः' – प्रत्येक राज्य के ६ आन्तरिक-अंग (स्वामी, अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, कोश, दण्ड) – जब बाह्य-मण्डल के ६ राज्यों पर लागू होते हैं, तो ६x६=३६ 'शक्ति-बिन्दु' (Power nodes) बनते हैं। यह 'आन्तर-बाह्य-शक्ति-गुणन' (Internal-External power multiplication) है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'राष्ट्रीय-शक्ति-सूचकांक' (National Power Index) – ६ प्रमुख देशों (जैसे G7 में से ६) की ६-६ क्षमताएँ (आर्थिक, सैन्य, राजनयिक, सांस्कृतिक, तकनीकी, जनसांख्यिकी) – कुल ३६ सूचकों (Indicators) पर विश्व-शक्ति-संतुलन मापा जाता है।

श्लोक ३३ (एकविंशति – २१)

श्लोक

सप्तप्रकृतिकाः सर्वे विजिगीष्वरिमध्यमाः ।
एकविंशतिरित्याहुः परे च नयवादिनः ॥३३॥

IAST

Saptaprakṛtikāḥ sarve vijigīṣvarimadhyamāḥ |
Ekaviṃśatirityāhuḥ pare ca nayavādinaḥ ||33||

शब्दार्थ

- सप्तप्रकृतिकाः – सात-प्रकृतियों (सप्तांग) वाले
- सर्वे – सभी
- विजिगीषु – विजय-इच्छुक
- अरि – शत्रु
- मध्यमाः – मध्यम राजा
- एकविंशतिः – इक्कीस (२१)
- परे – अन्य
- नयवादिनः – नय/नीति-वादी आचार्य
- आहुः – कहते हैं ।

भावार्थ

अन्य नीति-वादी आचार्य **विजिगीषु, अरि एवं मध्यम** – इन तीनों को (प्रत्येक की) **सात-प्रकृतियाँ** (सप्तांग) मानकर – ३ x ७ = **२१ (एकविंशति)** कहते हैं।

दार्शनिक विवेचन

यहाँ केवल मूल-त्रिक (विजिगीषु, अरि, मध्यम) को लिया गया है, तथा प्रत्येक की पूर्ण सप्त-प्रकृतियाँ (स्वामी, अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, कोश, दण्ड, मित्र) – ७ अंग – जोड़कर २१ बनाए गए हैं। यह 'सीमित-गठबन्धन' (Limited alliance) का गणित है, जो केवल प्रत्यक्ष-प्रतिस्पर्धियों पर केन्द्रित है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'क्षेत्रीय-सुरक्षा-गठबन्धन' (Regional Security Alliance) – जैसे कि भारत-चीन-पाकिस्तान (त्रिक) – इन तीनों की ७-७ सैन्य-आर्थिक-राजनयिक-क्षमताओं (सूचकांकों) का विश्लेषण – कुल २१ बिन्दु (21-point analysis) – किसी भी 'क्षेत्रीय-संतुलन' (Regional balance) के लिए पर्याप्त माना जाता है।

श्लोक ३४ (चतुः-अष्टक – ८ एवं अक्षर-सम्मित)

श्लोक

चत्वारः पार्थिवा मौलाः पृथङ्मित्रैः सहाष्टकम् ।
अमात्यादिभिरेते च जगत्यक्षरसम्मिताः ॥३४॥

IAST

Catvāraḥ pārthivā maulāḥ pṛthaṅmitraiḥ sahāṣṭakam |
Amātyādibhirete ca jagaty akṣarasammitāḥ ||34||

शब्दार्थ

- चत्वारः – चार
- पार्थिवाः – राजा
- मौलाः – मौला/मूल/प्रधान
- पृथक् – अलग-अलग
- मित्रैः – मित्रों के साथ
- सह – सहित
- अष्टकम् – आठ (संख्या)
- अमात्यादिभिः – अमात्य (मंत्री) आदि प्रकृतियों से
- एते – ये
- जगति – संसार/लोक में
- अक्षरसम्मिताः – अक्षर-सम्मित (वर्णों/संख्याओं के समान मापनीय/गणनीय) हैं ।

भावार्थ

चार **मौला (मूल/प्रधान)** राजा, जो अपने-अपने **मित्रों (सहायकों)** के साथ मिलकर **आठ (अष्टकम्)** हो जाते हैं; तथा **अमात्य-आदि प्रकृतियों** सहित ये (प्रत्येक राजा के ६ अंग) संसार में **अक्षर-सम्मित** (वर्णमाला/संख्याओं के समान परिमेय/गणनीय) कहे जाते हैं।

दार्शनिक विवेचन

'अक्षर-सम्मिताः' – 'अक्षर' अर्थात् 'संख्या/गणितीय-इकाई' – यह बताता है कि राज्य-शक्ति को 'गणितीय-समीकरण' (Mathematical equation) के रूप में मापा जा सकता है। चार मूल-राजा (जैसे चार दिशाओं के) + उनके चार मित्र = ८ (अष्टक)। यह 'अष्ट-दिक्पाल-मण्डल' (Eight-directional mandala) का सूचक है – जो 'व्यवहार-सापेक्ष-गणना' (Relative calculability) पर बल देता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'दिशा-विशेष-रणनीति' (Directional Strategy) – चार प्रमुख दिशाओं (उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम) के राज्य/सहयोगी – कुल ८ 'पड़ोसी-अभिनेता' (Neighboring actors) – इन ८ की शक्तियों की 'गणितीय-मॉडलिंग' (Mathematical modeling) आज की 'भू-राजनीति' का आधार है।

श्लोक ३५ (दशक-मण्डल – अग्र-पश्च-विस्तार)

श्लोक

विजिगीषोः पुरस्ताच्च ये च पश्चात्प्रकीर्तिताः ।
दशकं मण्डलमिदं मण्डलज्ञाः प्रचक्षते ॥३५॥

IAST

Vijigīṣoḥ purastācca ye ca paścātprakīrtitāḥ |
Daśakaṃ maṇḍalamidaṃ maṇḍalajñāḥ pracakṣate ||35||

शब्दार्थ

- विजिगीषोः – विजय-इच्छुक राजा के
- पुरस्तात् – आगे (पूर्व/सामने)
- ये – जो (राज्य हैं)
- पश्चात् – पीछे (पश्चिम/पीठ)
- प्रकीर्तिताः – कहे गये हैं
- दशकम् – दस (संख्या)
- मण्डलम् – मण्डल
- मण्डलज्ञाः – मण्डल-ज्ञाता
- प्रचक्षते – कहते हैं ।

भावार्थ

मण्डल-ज्ञाता **विजिगीषु के आगे (पुरस्तात्)** तथा **पीछे (पश्चात्)** स्थित राज्यों को मिलाकर **दशक (दस)** मण्डल कहते हैं – (विजिगीषु स्वयं + ४ अग्र-राज्य + ४ पश्च-राज्य = ९? अथवा पूर्वोक्त विस्तार से १०) – यह 'अग्र-पश्च-सुरक्षा-परिधि' (Front-back security periphery) का बोध है।

दार्शनिक विवेचन

'पुरस्तात्' एवं 'पश्चात्' – अग्र एवं पश्च दोनों मोर्चों के राज्यों को मिलाकर १० बनते हैं। यह 'द्वि-मोर्चा-रणनीति' (Two-front strategy) का 'दश-दिशीय-विस्तार' (Ten-directional expansion) है। यह विजिगीषु को अपने चारों ओर (आगे-पीछे-बायें-दायें) के सम्पूर्ण 'सुरक्षा-जाल' (Security net) का ज्ञान देता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'सुरक्षा-परिधि' (Security Perimeter) – किसी राष्ट्र (विजिगीषु) के पूर्वी-पड़ोसी (पुरस्तात्) एवं पश्चिमी-पड़ोसी (पश्चात्) – कुल १० देश (पूर्व में ५ + पश्चिम में ५) – इन्हीं पर 'सैन्य-तैनाती' (Military deployment) एवं 'कूटनीतिक-पहल' (Diplomatic initiatives) केन्द्रित होती हैं।

श्लोक ३६ (दश-राज-षष्टि – ६०)

श्लोक

दशानां भूमिपालानाम् अमात्याद्याः पृथक् पृथक् ।
मण्डलं मण्डलविदः षष्टिसङ्ख्यं प्रचक्षते ॥३६॥

IAST

Daśānāṃ bhūmipālānām amātyādyāḥ pṛthak pṛthak |
Maṇḍalaṃ maṇḍalavidaḥ ṣaṣṭisaṅkhyaṃ pracakṣate ||36||

शब्दार्थ

- दशानाम् – दस
- भूमिपालानाम् – राजाओं की
- अमात्याद्याः – अमात्य (मंत्री) आदि प्रकृतियाँ
- पृथक् पृथक् – अलग-अलग
- मण्डलम् – मण्डल
- मण्डलविदः – मण्डल-वेत्ता
- षष्टिसङ्ख्यम् – साठ (६०) संख्या वाला
- प्रचक्षते – कहते हैं ।

भावार्थ

दस राजाओं (दशानाम्) में से प्रत्येक की **अमात्य-आदि (६) प्रकृतियाँ** (राजा सहित ६ अंग) अलग-अलग (पृथक् पृथक्) गिनने पर – १० x ६ = **६० (षष्टिसङ्ख्यम्)** – यह मण्डल-संख्या मण्डल-विशेषज्ञ कहते हैं।

दार्शनिक विवेचन

यह पूर्वोक्त (श्लोक ३५) 'दशक-मण्डल' का आन्तरिक-विस्तार है – १० राजाओं की ६-६ प्रकृतियाँ = ६० शक्ति-बिन्दु। यह 'कुल-शक्ति-माप' (Total power measurement) का एक मानक सूत्र है, जो 'गणितीय-निश्चयात्मकता' (Mathematical determinism) को दर्शाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'वैश्विक-आर्थिक-सूचकांक' (Global Economic Index) – १० प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं (G20 में से १०) की ६-६ क्षमताएँ (जीडीपी, निर्यात, आयात, ऋण, सोना, मुद्रास्फीति) – कुल ६० 'आर्थिक-संकेतक' (Economic indicators) – इसी ६०-बिन्दु (60-point) पर 'विश्व-अर्थव्यवस्था-मॉडल' (Global economic model) आधारित है।

श्लोक ३७ (पञ्चक-एवं-त्रिंशत् – ५ एवं ३०)

श्लोक

प्राग्यौ द्वौ विजिगीषुश्च पश्चिमौ चेति पञ्चकम् ।
अमात्याद्याः पृथक् चैषां त्रिंशत्कं हि प्रचक्षते ॥३७॥

IAST

Prāg yau dvau vijigīṣuśca paścimau ceti pañcakam |
Amātyādyāḥ pṛthak caiṣāṃ triṃśatkaṃ hi pracakṣate ||37||

शब्दार्थ

- प्राक् – आगे (पूर्व)
- यौ – जो (दो)
- द्वौ – दो
- विजिगीषुः – विजय-इच्छुक (स्वयं)
- च – तथा
- पश्चिमौ – पीछे (पश्चिम) के दो
- इति – इस प्रकार
- पञ्चकम् – पाँच (संख्या)
- अमात्याद्याः – अमात्य आदि प्रकृतियाँ
- पृथक् – अलग-अलग
- एषाम् – इन (पाँच) की
- त्रिंशत्कम् – तीस (३०)
- प्रचक्षते – कहते हैं ।

भावार्थ

(विजिगीषु के) **आगे (पूर्व) के दो, स्वयं विजिगीषु, तथा पीछे (पश्चिम) के दो** – इस प्रकार **पाँच (पञ्चकम्)** राजा; तथा इन पाँचों की **अमात्य-आदि (६) प्रकृतियाँ** अलग-अलग – ५ x ६ = **३० (त्रिंशत्कम्)** – मण्डल-संख्या कही गयी है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'पञ्च-दिशीय-मण्डल' (Five-directional mandala) है – पूर्व-दो, पश्च-दो, एवं स्वयं मध्य – यह 'पञ्च-तत्त्व-मॉडल' (Pancha-tattva model) है, जो 'सरलतम-सुरक्षा-विश्लेषण' (Simplest security analysis) प्रदान करता है। ५ राजा x ६ अंग = ३० – यह 'कार्य-क्षम-मण्डल' (Operational mandala) कहलाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'क्षेत्रीय-कमान-संरचना' (Regional Command Structure) – किसी राष्ट्र के पूर्वी-कमान (२), पश्चिमी-कमान (२), एवं केन्द्रीय-कमान (स्वयं) – कुल ५ कमान; तथा प्रत्येक की ६ सैन्य-क्षमताएँ (जल, थल, वायु, साइबर, अन्तरिक्ष, विशेष-बल) – ५ x ६ = ३० 'युद्ध-क्षमता-सूचक' (Combat capability indicators)।

श्लोक ३८ (अरि-पक्ष-दृष्टि एवं न्याय्य-त्रिक-पञ्चक)

श्लोक

अरेरप्येवमेवेति दृष्टं दृष्टिमतां वरैः ।
पञ्चकं मण्डलं न्याय्यं त्रितयं च मनीषिभिः ॥३८॥

IAST

Arerapyevameveti dṛṣṭaṃ dṛṣṭimatāṃ varaiḥ |
Pañcakaṃ maṇḍalaṃ nyāyyaṃ tritayaṃ ca manīṣibhiḥ ||38||

शब्दार्थ

- अरेः – शत्रु (अरि) के
- अपि – भी
- एवम् – इसी प्रकार
- एव – ही
- इति – इस प्रकार
- दृष्टम् – देखा/माना गया
- दृष्टिमताम् – दृष्टि-सम्पन्न/विद्वानों
- वरैः – श्रेष्ठ (विद्वानों) द्वारा
- पञ्चकम् – पाँच (संख्या)
- मण्डलम् – मण्डल
- न्याय्यम् – न्याय्य/उचित
- त्रितयम् – तीन (संख्या)
- मनीषिभिः – मनीषियों/विचारकों द्वारा ।

भावार्थ

श्रेष्ठ विद्वानों (दृष्टिमतां वरैः) ने **शत्रु (अरि) के पक्ष** में भी यही (उपर्युक्त) दृष्टि (मण्डल-गणना) मानी है। इस प्रकार **पञ्चक (५)** एवं **त्रितय (३)** मण्डल को मनीषियों ने **न्याय्य (उचित/युक्तिसंगत)** कहा है –

अर्थात् शत्रु के सापेक्ष भी यही गणित लागू होता है, क्योंकि मण्डल-सिद्धान्त 'आपेक्षिक' (Relativistic) है।

दार्शनिक विवेचन

यह अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्धान्त है – 'अरेरपि' (शत्रु के लिए भी) – अर्थात् मण्डल-गणना 'सापेक्ष' (Relative) है। विजिगीषु के लिए जो 'अरि' है, उस अरि के लिए विजिगीषु स्वयं 'अरि' बन जाता है। अतः दोनों पक्षों पर समान गणित (पञ्चक/त्रिक) लागू होता है। यह 'आपेक्षिकता-सिद्धान्त' (Theory of Relativity) का राजनीतिक रूप है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'गेम-थ्योरी' (Game Theory) – प्रत्येक खिलाड़ी (विजिगीषु/अरि) अपने-अपने परिप्रेक्ष्य (Perspective) से समान 'गणितीय-सारणी' (Payoff matrix) देखता है। ५-खिलाड़ी या ३-खिलाड़ी मॉडल (जैसे चीन-अमेरिका-रूस) – दोनों ही 'न्याय्य' (Valid) हैं, क्योंकि वे 'आपेक्षिक-सत्य' (Relative truth) पर आधारित हैं।

श्लोक ३९ (पराशर-मत – द्वि-प्रकृति)

श्लोक

द्वे एव प्रकृती न्याय्ये इत्युवाच पराशरः ।
अभियोक्तृप्रधानत्वात् तथान्यो योऽभियुज्यते ॥३९॥

IAST

Dve eva prakṛtī nyāyye ityuvāca parāśaraḥ |
Abhiyoktṛpradhānatvāt tathānyo yo'bhiyujyate ||39||

शब्दार्थ

• द्वे – दो
• एव – ही
• प्रकृती – प्रकृतियाँ/अंग
• न्याय्ये – न्याय्य/युक्तिसंगत
• पराशरः – पराशर (महर्षि/आचार्य)
• अभियोक्तृप्रधानत्वात् – अभियोक्ता (आक्रमणकर्ता/विजिगीषु) की प्रधानता के कारण
• तथा – तथा
• अन्यः – अन्य (अभियुक्त – जिस पर आक्रमण हो/शत्रु)
• अभियुज्यते – आक्रमण/अभियोग किया जाता है ।

भावार्थ

पराशर (महर्षि) ने कहा कि **दो (द्वे)** ही प्रकृतियाँ (राज्य-अंग) **न्याय्य** (युक्तिसंगत) हैं – क्योंकि **अभियोक्ता** (आक्रमणकर्ता/विजिगीषु) ही प्रधान है, तथा दूसरा वह (अभियुक्त) है जिस पर आक्रमण (अभियोग) किया जाता है (अरि)। केवल 'आक्रमणकर्ता-आक्रमणग्रस्त' (Aggressor-Aggressed) का द्वैत ही मूल है।

दार्शनिक विवेचन

यह मण्डल-सिद्धान्त का **अत्यन्त सरलीकृत (न्यूनतम) रूप** है। पराशर (जो 'विष्णुपुराण' आदि के आचार्य हैं) ने समस्त गणितीय-विस्तार को नकारते हुए केवल **'कर्ता-भोक्ता' (कर्म-सिद्धान्त)** को आधार बनाया – जो आक्रमण करता है (विजिगीषु) तथा जिस पर आक्रमण होता है (अरि) – ये दो ही मूल-प्रकृतियाँ हैं। यह 'अद्वैत-राजनीति' (Monistic politics) के समीप है, जहाँ सम्पूर्ण मण्डल एक ही 'संघर्ष-द्वैत' (Conflict-duality) में समाहित है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'संघर्ष-सिद्धान्त' (Conflict Theory) – किसी भी युद्ध/प्रतिस्पर्धा में मूलतः दो ही पक्ष होते हैं – 'आक्रामक' (विजिगीषु) एवं 'रक्षक' (अरि)। शेष सभी (मित्र, मध्यम, उदासीन) इन्हीं दो के विस्तार हैं। यही 'क्लॉजविट्ज़' (Clausewitz) का 'द्वैत-युद्ध-सिद्धान्त' (Dualistic war theory) है।

श्लोक ४० (एक-प्रकृति – आपेक्षिकता का चरम)

श्लोक

परस्पराभियोगेन विजिगीषोररेस्तथा ।
अरित्वविजिगीषुत्वे एका प्रकृतिरित्यतः ॥४०॥

IAST

Parasparābhiyogena vijigīṣorarestathā |
Aritvavijigīṣutve ekā prakṛtirityataḥ ||40||

शब्दार्थ

- परस्पराभियोगेन – परस्पर-आक्रमण/प्रतिस्पर्धा के कारण
- विजिगीषोः – विजय-इच्छुक की
- अरेः – शत्रु की
- तथा – तथा
- अरित्व – शत्रुत्व
- विजिगीषुत्वे – विजिगीषुत्व (विजय-इच्छा)

• एका – एक (ही)
• प्रकृतिः – प्रकृति/मूल-तत्त्व
• इति – इस प्रकार
• अतः – इसलिए ।

भावार्थ

परस्पर-आक्रमण (प्रतिस्पर्धा) के कारण **विजिगीषु** एवं **अरि** – दोनों की (परस्पर-विरोधी) स्थितियाँ (शत्रुत्व-विजय-इच्छा) वस्तुतः **एक ही मूल-प्रकृति** (एका प्रकृतिः) हैं – क्योंकि दोनों परस्पर-आपेक्षिक (Relative) हैं। एक के लिए विजिगीषु, दूसरे के लिए अरि – यह दृष्टिकोण-मात्र है।

दार्शनिक विवेचन

यह **मण्डल-नीति का 'अद्वैत' (Non-dual) चरम** है – 'परस्पराभियोग' (Mutual aggression) ही एकमात्र-वास्तविकता है। विजिगीषु-अरि का भेद केवल 'दृष्टिकोण' (Perspective) है – जैसे 'यह मेरा शत्रु है' कहना, वहीं दूसरा कहता है 'यह मेरा शत्रु है' – वस्तुतः 'शत्रुता' (Aggression) ही एकमात्र 'प्रकृति' (Nature/Substance) है। यह 'सापेक्षिकता' (Relativity) का राजनीतिक-दर्शन है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'अन्तर्राष्ट्रीय-सम्बन्धों का निर्माणवाद' (Constructivism) – 'शत्रु' और 'मित्र' की परिभाषाएँ स्थायी नहीं, अपितु पारस्परिक-धारणाओं (Mutual perceptions) से निर्मित होती हैं। शीत-युद्ध में अमेरिका-सोवियत-संघ – दोनों स्वयं को 'विजिगीषु' एवं दूसरे को 'अरि' मानते थे – वस्तुतः 'प्रतिस्पर्धा' (Competition) ही एकमात्र-प्रकृति थी।

श्लोक ४१ (बहुधा मत, किन्तु द्वादश-राजक ही स्फुट)

श्लोक

इति प्रकारं बहुधा मण्डलं परिचक्षते ।
सर्वलोकप्रतीतं हि स्फुटं द्वादशराजकम् ॥४१॥

IAST

Iti prakāraṃ bahudhā maṇḍalaṃ paricakṣate |
Sarvalokapratītaṃ hi sphuṭaṃ dvādaśarājakam ||41||

शब्दार्थ

• इति – इस प्रकार
• प्रकारम् – प्रकार/रूप
• बहुधा – बहुत प्रकार से

- मण्डलम् – मण्डल
- परिचक्षते – वर्णन/कथन करते हैं
- सर्वलोकप्रतीतम् – सर्व-लोक (समस्त संसार) में प्रतीत (प्रसिद्ध/मान्य)
- स्फुटम् – स्पष्ट
- द्वादशराजकम् – बारह राजाओं वाला (द्वादश-राजक) ।

भावार्थ

इस प्रकार मण्डल-विद्वानों ने **बहुत-से प्रकारों** (त्रिक, षट्क, ३६, २१, ८, १०, ६०, ३०, ५, ३, २, १) में मण्डल का वर्णन किया है; परन्तु **समस्त लोक** (सर्वलोक) में **स्पष्ट (स्फुटम्)** एवं **प्रतीत (मान्य) बारह-राजाओं वाला (द्वादशराजकम्)** मण्डल ही है। यही मध्यम-मार्ग (संतुलित-विस्तार) है।

दार्शनिक विवेचन

यह श्लोक सम्पूर्ण 'संख्या-बहुलता' का **समाधान (Conclusion)** प्रस्तुत करता है – १ से लेकर १०८ तक की सभी गणनाएँ 'सैद्धान्तिक' (Theoretical) हैं, किन्तु **व्यवहार में (व्यवहारतः) 'द्वादश-राजक' (१२)** ही सर्वमान्य एवं स्पष्ट है। यह १२ 'व्यावहारिक-सीमा' (Practical boundary) है – न अत्यधिक-सरल (त्रिक) और न अत्यन्त-जटिल (३२४) – यह 'मध्यम-मार्ग' (Madhyama-mārga) है, जो 'व्यवहार-कुशलता' (Pragmatism) को दर्शाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'अन्तर्राष्ट्रीय-सम्बन्धों में व्यावहारिकता' (Practical IR) – सैद्धान्तिक-मॉडल (३२४ सूचक) जटिल हैं, परन्तु वास्तविक-कूटनीति (Realpolitik) में १२ प्रमुख-शक्तियाँ (G20 में से १२) ही केन्द्र-बिन्दु होती हैं। यही 'संयुक्त-राष्ट्र सुरक्षा-परिषद्' के विस्तार-वाद (Expansion debate) का भी आधार है – १२-सदस्यीय मॉडल सर्वाधिक स्वीकार्य है।

श्लोक ४२ (मण्डल-वृक्ष-रूपक – नीतिवित् की परीक्षा)

श्लोक

अष्टशाखं चतुर्मूलं षष्टिपत्रं द्वये स्थितम् ।
षट्पुष्पं त्रिफलं वृक्षं यो जानाति स नीतिवित् ॥४२॥

IAST

Aṣṭaśākhaṃ caturmūlaṃ ṣaṣṭipatraṃ dvaye sthitam |
Ṣaṭpuṣpaṃ triphalaṃ vṛkṣaṃ yo jānāti sa nītivit ||42||

शब्दार्थ

- अष्टशाखम् – आठ शाखाओं वाला

• चतुर्मूलम् – चार जड़ें (मूल) वाला
• षष्टिपत्रम् – साठ पत्तियों वाला
• द्वये – दो (स्थानों/स्तरों) में
• स्थितम् – स्थित
• षट्पुष्पम् – छः फूलों वाला
• त्रिफलम् – तीन फलों वाला
• वृक्षम् – वृक्ष (इस) को
• यः – जो
• जानाति – जानता है
• सः – वह
• नीतिवित् – नीति-विद् (राजनीति-विशारद) है ।

भावार्थ

जो व्यक्ति इस **'मण्डल-वृक्ष'** को जानता है – जिसकी **आठ शाखाएँ (दिशाएँ/राज्य-अंग)** , **चार जड़ें (मूल-प्रकृतियाँ – अरि, मित्र, मध्यम, उदासीन)** , **साठ पत्तियाँ (विस्तृत-संख्याएँ)** , **दो स्तर (अग्र-पश्च)** , **छः फूल (अमात्य-आदि प्रकृतियाँ)** , तथा **तीन फल (धर्म, अर्थ, काम)** हैं – वही सच्चा **नीतिवित्** (राजनीति-विशारद) है। यह सम्पूर्ण मण्डल-शास्त्र का **रूपकात्मक-सार** (Metaphorical summary) है।

दार्शनिक विवेचन

यह **'मण्डल-वृक्ष' (Mandala Tree)** सम्पूर्ण नीति-शास्त्र का **स्थूल-सार (Macro-essence)** है –

- **८ शाखाएँ** = ८ दिशाएँ / ८ प्रकार के राज्य-सम्बन्ध (अग्र-पश्च-पार्श्व)।
- **४ जड़ें** = मूल-प्रकृतियाँ (अरि, मित्र, मध्यम, उदासीन) जो सम्पूर्ण मण्डल को धारण करती हैं।
- **६० पत्तियाँ** = पूर्वोक्त ६० (श्लोक ३६) – विस्तृत-शक्ति-बिन्दु।
- **२ स्तर** = आगे-पीछे (अग्र-पश्च-मोर्चा)।
- **६ फूल** = अमात्य-आदि प्रकृतियाँ (आन्तरिक-शक्तियाँ) जो फल-उत्पादक हैं।
- **३ फल** = त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ, काम) – राजनीति का परम-उद्देश्य। यह 'वृक्ष-रूपक' (Tree metaphor) 'जैविक-राज्य-दृष्टि' (Organic state-view) है – जो राज्य को एक सजीव-वृक्ष (Living tree) मानता है, जिसकी जड़ें (मूल-शक्तियाँ), तना (शासन), शाखाएँ (विस्तार), पत्तियाँ (जनता/सेना), फूल (योजनाएँ) एवं फल (लक्ष्य-प्राप्ति) होते हैं। इस सम्पूर्ण जीव-रूप को समझना ही 'नीतिवित्त्व' (Mastery of Polity) है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'सिस्टम-डायनामिक्स' (System Dynamics) एवं 'जैविक-संगठन-सिद्धान्त' (Organic organization theory) – किसी भी राष्ट्र/कम्पनी (वृक्ष) को समझने के लिए उसके **मूल-सिद्धान्त** (४ जड़ें), **संरचनात्मक-विस्तार** (८ शाखाएँ), **कार्य-विभाजन** (६० पत्तियाँ/सूचक), **द्वि-स्तरीय-रणनीति** (अग्र-पश्च), **आन्तरिक-प्रक्रियाएँ** (६ फूल), एवं **अन्तिम-लक्ष्य** (३ फल – धर्म/अर्थ/काम या सामाजिक-आर्थिक-आध्यात्मिक-विकास) – इन सबका समग्र-ज्ञान ही 'प्रणाली-विशेषज्ञ' (System expert) को 'राजनीति-विशारद' (Master of Governance) बनाता है। यही **'होलिस्टिक-मैनेजमेंट' (Holistic Management)** का प्राचीनतम एवं सर्वोत्कृष्ट सूत्र है।

श्लोक ४३ (मण्डल-अंगों की परिभाषा)

श्लोक

पार्ष्णिग्राहस्तदासारः शत्रुमित्रे प्रकीर्तिते ।
आक्रन्दोऽथ तदासारो विजिगीषोरुदाहृते ॥४३॥

IAST

Pārṣṇigrāhastadāsāraḥ śatrumitre prakīrtite |
Ākrando'tha tadāsāro vijigīṣorudāhṛte ||43||

शब्दार्थ

• पार्ष्णिग्राहः – पिछला शत्रु (पीछे से आघात करने वाला)
• तदासारः – उसका (शत्रु का) पार्श्व-सहायक
• शत्रुमित्रे – शत्रु-मित्र (शत्रु का सहायक राज्य)
• प्रकीर्तिते – कहे गये हैं
• आक्रन्दः – पिछला मित्र (संकट में सहायता हेतु पुकारा जाने वाला)
• अथ – तथा
• तदासारः – उस (विजिगीषु) का पार्श्व-सहायक
• विजिगीषोः – विजय-इच्छुक राजा के लिए
• उदाहृते – उदाहृत/कहे गये हैं ।

भावार्थ

शत्रु के संदर्भ में **पार्ष्णिग्राह** (पिछला शत्रु) एवं **तदासार** (उसका पार्श्व-सहायक) – तथा **शत्रुमित्र** (शत्रु का मित्र) – ये कहे गये हैं। इसी प्रकार विजिगीषु के लिए **आक्रन्द** (पिछला मित्र) एवं **तदासार** (उसका पार्श्व-सहायक) – ये उदाहृत किए गए हैं। इस प्रकार शत्रु-पक्ष एवं स्व-पक्ष – दोनों के पिछले एवं पार्श्वगत अंगों की पहचान की गयी है।

दार्शनिक विवेचन

यह 'चतुष्कोणीय-मण्डल-विश्लेषण' (Quadrant analysis) है – शत्रु का 'पार्ष्णि' (एड़ी/पीठ) एवं 'आसार' (पार्श्व/कंधा) – ये दोनों उसके सहायक अंग हैं; तथा विजिगीषु का 'आक्रन्द' एवं 'तदासार' – ये उसके सहायक अंग। इस द्वि-पक्षीय (Bilateral) विभाजन से युद्ध-व्यूह की स्पष्टता आती है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक सैन्य-रणनीति में 'फ्रंट-लाइन', 'रियर-सपोर्ट' (पार्ष्णिग्राह/आक्रन्द) तथा 'फ्लैंकिंग' (आसार/तदासार) – इन तीनों दिशाओं (अग्र, पश्च, पार्श्व) का विश्लेषण किसी भी युद्ध-अभियान (War theater) का आधार होता है।

श्लोक ४४ (अग्र-पश्च-मित्र-युद्ध-व्यूह)

श्लोक

पुरो यायाद्विगृह्यैव मित्राभ्यां पश्चिमावरी ।
पश्चिमाविव पूर्वाभ्यामरिं तन्मित्रमेव च ॥४४॥

IAST

Puro yāyādvigṛhyaiva mitrābhyāṃ paścimāvarī |
Paścimāviva pūrvābhyāmarin tanmitrameva ca ||44||

शब्दार्थ

• पुरः – आगे (अग्र-दिशा में)
• यायात् – जाए/प्रस्थान करे
• विगृह्य – युद्ध करके/मिलकर
• एव – ही
• मित्राभ्याम् – दो मित्रों (सहायकों) के साथ
• पश्चिमावरी – पश्चिम (पीछे) वाले (दो मित्र)
• पश्चिमौ – पीछे वाले (रक्षक)
• इव – के समान
• पूर्वाभ्याम् – पूर्व (आगे) वाले (दो मित्रों) द्वारा
• अरिम् – शत्रु को
• तन्मित्रम् – उस (शत्रु) के मित्र को
• एव – ही
• च – तथा ।

भावार्थ
राजा को **पीछे (पश्चिम) के दो मित्रों** को (आगे आक्रमण-हेतु) संग लेकर **आगे (पुरः)** बढ़ना चाहिए; तथा **आगे (पूर्व) के दो मित्रों** को पीछे (पश्चिम) रक्षक-भाव से रखकर – इस प्रकार शत्रु एवं उसके मित्र (तन्मित्रम्) पर आक्रमण करना चाहिए।

दार्शनिक विवेचन

यह 'क्रॉस-डिप्लॉयमेंट' (Cross-deployment) का सिद्धान्त है – पीछे के मित्र आगे हमला करें, आगे के मित्र पीछे रक्षा करें – जिससे शत्रु को भ्रमित (Confusion) किया जाए। यह 'अप्रत्याशित-व्यूह-रचना' (Unexpected battle array) है, जो अर्थशास्त्र के 'विधुर-व्यूह' से मेल खाता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'पिंसर-मूवमेंट' (Pincer movement) एवं 'फ्रंट-बैक स्वैप' – जहाँ पीछे की सेना अग्र-आक्रमण करे तथा अग्र-सेना पीछे सुरक्षा प्रदान करे – यह 'मोबाइल-वारफेयर' (Mobile warfare) का प्राचीन सूत्र है।

श्लोक ४५ (शत्रु-मित्र-मित्र का स्तम्भन)

श्लोक

अरिमित्रस्य मित्रं तु कृतकृत्येन भूयसा ।
संस्तम्भ्योभयमित्रेण पश्चाद्गच्छेन्नरेश्वरः ॥४५॥

IAST

Arimitrasya mitraṃ tu kṛtakṛtyena bhūyasā |
Saṃstambhyobhayamitreṇa paścādgacchennareśvaraḥ ||45||

शब्दार्थ
- अरिमित्रस्य – शत्रु-मित्र (शत्रु के मित्र) का
- मित्रम् – (उसका) मित्र (तृतीय-स्तर)
- कृतकृत्येन – कृतकार्य (संतुष्ट/वशीभूत) करके
- भूयसा – अधिक प्रयास/उपाय से
- संस्तम्भ्य – स्तम्भित/रोक/तटस्थ करके
- उभयमित्रेण – दोनों (विजिगीषु एवं शत्रु) के सामान्य-मित्र के द्वारा
- पश्चात् – पीछे (से / बाद में)
- गच्छेत् – आगे बढ़े
- नरेश्वरः – राजा ।

भावार्थ
राजा (नरेश्वर) को **शत्रु-मित्र के मित्र** (तृतीय-कोटि) को **उभय-मित्र** (दोनों पक्षों का सामान्य-मित्र) के द्वारा **अत्यधिक प्रयास (भूयसा)** से **कृतकृत्य (संतुष्ट/वशीभूत)** करके **संस्तम्भ्य (रोक/तटस्थ)** करना चाहिए; तत्पश्चात् (पश्चात्) अपने विजय-मार्ग पर आगे बढ़ना चाहिए।

दार्शनिक विवेचन

'उभयमित्र' (Common friend) – यह कूटनीति का अत्यन्त सूक्ष्म अस्त्र है। इसे 'संस्तम्भ्य' (नियंत्रित/तटस्थ) करके शत्रु के तृतीय-स्तर-गठबन्धन (Third-tier alliance) को निष्क्रिय कर दिया जाता है। यह 'साम, दान, भेद' का संयुक्त प्रयोग है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक कूटनीति में 'शत्रु-मित्र के मित्र' को 'तटस्थ-मध्यस्थ' (Neutral mediator) द्वारा मनाकर उसे अलग-थलग करना – जैसे यूक्रेन-रूस संकट में तुर्की (उभयमित्र) द्वारा मध्यस्थता – इसी 'संस्तम्भन' का आधुनिक रूप है।

श्लोक ४६ (आक्रन्द-आसार द्वारा पार्ष्णिग्राह-दमन)

श्लोक

आक्रन्देनात्मना चैव पार्ष्णिग्राहं प्रपीडयेत् ।
आक्रन्देन तदासारम् आक्रन्दासारभागिना ॥४६॥

IAST

Ākrandenātmanā caiva pārṣṇigrāhaṃ prapīḍayet |
Ākrandena tadāsāram ākrandāsārabhāginā ||46||

शब्दार्थ
- आक्रन्देन – पिछले मित्र (आक्रन्द) के साथ
- आत्मना – स्वयं (राजा) के साथ
- एव – ही
- पार्ष्णिग्राहम् – पिछले शत्रु को
- प्रपीडयेत् – भलीभाँति दबाए/पीड़ित करे
- आक्रन्देन – (फिर) पिछले मित्र के साथ
- तदासारम् – उस (पार्ष्णिग्राह) के पार्श्व-सहायक को
- आक्रन्दासारभागिना – आक्रन्द (पिछला मित्र) एवं आसार (पार्श्व-मित्र) – दोनों से युक्त होकर ।

भावार्थ
राजा को **आक्रन्द (पिछला मित्र)** एवं **स्वयं (आत्मना)** – दोनों के साथ मिलकर **पार्ष्णिग्राह (पिछले शत्रु)** को दबाना चाहिए; तथा **आक्रन्द (पिछले मित्र)** के साथ **तदासार (उस पार्ष्णिग्राह के पार्श्व-सहायक)** को – **आक्रन्द एवं आसार (पार्श्व-मित्र)** – दोनों को साथ लेकर दबाना चाहिए।

दार्शनिक विवेचन

'आक्रन्दासारभागिना' – पिछला मित्र एवं पार्श्व-मित्र – इन दो 'पार्श्व-शक्तियों' (Flanking powers) का समन्वय करके पिछले शत्रु एवं उसके पार्श्व-सहायक को 'द्वि-मुखी-आघात' (Two-front blow) दिया जाता है। यह 'सरकल-रणनीति' (Encirclement strategy) है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'पश्चिमी-पूर्वी दो-मोर्चा-युद्ध' – जैसे भारत की पश्चिमी सीमा पर पाकिस्तान (पार्ष्णिग्राह) एवं उसके सहयोगी चीन (तदासार) – इन दोनों पर अपने पिछले मित्रों (म्यांमार/नेपाल?) एवं पार्श्व-मित्रों (अमेरिका/रूस?) की सहायता से दबाव बनाना – इसी 'मण्डल-शोधन' का आधुनिक अनुप्रयोग है।

श्लोक ४७ (मित्र-समित्र द्वारा रिपु-उद्धरण)

श्लोक

मित्रेण चात्मना चैव कुर्वीतोद्धरणं रिपोः ।
मित्रेण हि समित्रेण रिपुमित्रं प्रपीडयेत् ॥४७॥

IAST

Mitreṇa cātmanā caiva kurvītoddharaṇaṃ ripoḥ |
Mitreṇa hi samitreṇa ripumitraṃ prapīḍayet ||47||

शब्दार्थ
• मित्रेण – मित्र (सहायक राजा) के साथ
• आत्मना – स्वयं (राजा) के साथ
• च – तथा
• एव – ही
• कुर्वीत – करे
• उद्धरणम् – उत्सन्न/नाश/उखाड़ना
• रिपोः – शत्रु (मुख्य) का
• मित्रेण – मित्र के साथ
• समित्रेण – संयुक्त-मित्र (सामान्य-मित्र) के साथ

• रिपुमित्रम् – शत्रु-मित्र (शत्रु के सहायक) को
• प्रपीडयेत् – भलीभाँति दबाए/पीड़ित करे ।

भावार्थ
राजा को **अपने मित्र** एवं **स्वयं** (आत्मना) मिलकर **मुख्य शत्रु (रिपु)** का उद्धरण (नाश/उखाड़-फेंक) करना चाहिए; तथा **मित्र** एवं **समित्र (सामान्य/संयुक्त-मित्र)** – दोनों के साथ मिलकर **शत्रु-मित्र (रिपुमित्र)** को भलीभाँति दबाना चाहिए।

दार्शनिक विवेचन

'समित्रेण' – यहाँ 'समित्र' का अर्थ 'उभयमित्र' (सामान्य-मित्र) है, जो विजिगीषु एवं शत्रु दोनों से मित्रता रखता हो। इस 'सामान्य-मित्र' को अपने पक्ष में करके शत्रु-मित्र को अलग-थलग करना – यह 'भेद-नीति' (Divide and rule) का चरम रूप है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'गठबन्धन-युद्ध' – जैसे अमेरिका ने द्वितीय विश्व-युद्ध में ब्रिटेन (मित्र) एवं स्वयं (आत्मना) से जर्मनी (रिपु) पर आक्रमण किया, तथा 'समित्र' (सोवियत-संघ) से जर्मनी के सहयोगी (रिपुमित्र) को दबाया – यही 'द्वि-स्तरीय-गठबन्धन-आक्रमण' है।

श्लोक ४८ (तृतीय-स्तरीय शत्रु-मित्र का दमन)

श्लोक

अरिमित्रस्य मित्रस्य पीडनं पृथिवीपतिः ।
कुर्वीतोभयमित्रेण मित्रमित्रेण चैव हि ॥४८॥

IAST

Arimitrasya mitrasya pīḍanaṃ pṛthivīpatiḥ |
Kurvītobhayamitreṇa mitramitreṇa caiva hi ||48||

शब्दार्थ
• अरिमित्रस्य – शत्रु-मित्र का
• मित्रस्य – (उसका) मित्र (तृतीय-स्तर)
• पीडनम् – दमन/पीड़न
• पृथिवीपतिः – राजा
• कुर्वीत – करे
• उभयमित्रेण – सामान्य-मित्र (दोनों के मित्र) के द्वारा
• मित्रमित्रेण – मित्र-मित्र (अपने मित्र का मित्र) के द्वारा

- च – तथा
- एव – ही
- हि – निश्चय ही।

भावार्थ
राजा (पृथिवीपति) को **शत्रु-मित्र के मित्र** (तृतीय-स्तर) का पीड़न/दमन **उभय-मित्र** (दोनों पक्षों के सामान्य-मित्र) एवं **मित्र-मित्र** (अपने मित्र का मित्र) – इन दोनों के द्वारा करना चाहिए। इस प्रकार शत्रु-गठबन्धन की तीसरी-परत को भी निष्क्रिय किया जाता है।

दार्शनिक विवेचन

यह **'मण्डल-शोधन' का तृतीय-सोपान** है – शत्रु के मित्र के मित्र (अर्थात् शत्रु-गठबन्धन की सबसे बाहरी परत) को भी दबाना। इससे शत्रु का 'सुरक्षा-घेरा' (Security ring) पूर्णतः ढह जाता है। यह 'अर्थशास्त्र' के 'मित्र-मित्र-निग्रह' सिद्धान्त पर आधारित है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'गठबन्धन-अलगाव' (Alliance isolation) – शत्रु-देश के सहयोगी (जैसे रूस के लिए बेलारूस) के मित्र (जैसे चीन) को भी राजनयिक रूप से दबाना (उभयमित्र/मित्रमित्र द्वारा) – इस 'सोपानिक-गठबन्धन-क्षरण' (Tiered alliance erosion) का यही प्राचीन सूत्र है।

श्लोक ४९ (क्रम-योग – अन्तरान्तरा पीड़न)

श्लोक

अनेन क्रमयोगेन विजिगीषुः सदोत्थितः।
पीडयेदहितं शत्रुं मित्राणामन्तरान्तरा ॥४९॥

IAST

Anena kramayogena vijigīṣuḥ sadotthitaḥ |
Pīḍayedahitaṃ śatruṃ mitrāṇāmantarāntarā ||49||

शब्दार्थ
- अनेन – इस (पूर्वोक्त)
- क्रमयोगेन – क्रम-योग (प्रक्रिया/विधि) द्वारा
- विजिगीषुः – विजय-इच्छुक राजा
- सदोत्थितः – सदा उद्यत/तत्पर
- पीडयेत् – दबाए
- अहितम् – अहितकारी

• शत्रुम् – शत्रु को
• मित्राणाम् – मित्र-राज्यों के
• अन्तरान्तरा – मध्य-मध्य/बीच-बीच में (स्थित) ।

भावार्थ
इस **क्रम-योग (उपर्युक्त सोपानिक विधि)** द्वारा **सदा उत्थित (तत्पर)** विजिगीषु राजा **मित्र-राज्यों के मध्य-मध्य (अन्तरान्तरा)** स्थित **अहितकारी शत्रु** पर दबाव (पीड़न) डालता रहे। अर्थात् मित्र-क्षेत्रों के बीच स्थित शत्रु-गढ़ों को घेरकर कमजोर किया जाए।

दार्शनिक विवेचन

'अन्तरान्तरा' – मित्र-राज्यों के बीच स्थित शत्रु-ठिकाने (जैसे 'घुसपैठ-क्षेत्र' या 'अलग-थलग-शत्रु-गढ़') को 'सरकल' (घेरा) बनाकर पीड़ित करना। यह 'द्वीप-गढ़-विजय' (Island-fort conquest) की रणनीति है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'एनक्लेव-रणनीति' – मित्र-राज्यों के मध्य स्थित शत्रु-क्षेत्र (जैसे कश्मीर/पोखरण-प्रकार) को कूटनीतिक/आर्थिक-घेराबन्दी (अन्तरान्तरा) से कमजोर करना – यह 'सैंडविच-स्ट्रैटेजी' (Sandwich strategy) का प्राचीन स्वरूप है।

श्लोक ५० (उभयतः पीड़न का फल – नाश/वशीकरण)

श्लोक

पीड्यमानो ह्युभयतः सदोद्युक्तैर्मनीषिभिः ।
रिपुरुच्छेदमायाति तद्वशे वावतिष्ठते ॥५०॥

IAST

Pīḍyamāno hyubhayataḥ sadodyuktairmanīṣibhiḥ |
Ripurucchedamāyāti tadvaśe vāvatiṣṭhate ||50||

शब्दार्थ
• पीड्यमानः – पीड़ित किया जा रहा (शत्रु)
• उभयतः – दोनों ओर से (आगे-पीछे/मित्र-स्वयं)
• सदोद्युक्तैः – सदा उद्यत/तत्पर (बुद्धिमान)
• मनीषिभिः – मन्त्रियों/राजाओं द्वारा
• रिपुः – शत्रु
• उच्छेदम् – उच्छेद/पूर्ण-नाश

• आयाति – प्राप्त होता है
• तद्वशे – उसके (विजिगीषु) के वश में
• वा – अथवा
• अवतिष्ठते – स्थित हो जाता है ।

भावार्थ
जब शत्रु को **दोनों ओर (उभयतः)** – अर्थात् आगे-पीछे/उत्तर-दक्षिण/मित्र-स्वयं – से **सदा उद्यत (तत्पर)** बुद्धिमान मन्त्रियों/राजाओं द्वारा लगातार पीड़ित किया जाता है, तो वह शत्रु **या तो पूर्णतः नष्ट (उच्छेद)** हो जाता है, **अथवा विजिगीषु के वश (अधीन)** में आ जाता है।

दार्शनिक विवेचन

यह **'पिंसर-आक्रमण' (Pincer movement) का फल** है – दोनों ओर से समकालिक-आघात (Synchronous attack) शत्रु की रक्षा-प्रणाली को चूर-चूर कर देता है। इस 'उभय-दिशीय-दबाव' (Bilateral pressure) का परिणाम या तो 'उच्छेद' (Complete annihilation) या 'आत्मसमर्पण' (Surrender) होता है। यह अर्थशास्त्र का 'शत्रु-निग्रह' (Subjugation of enemy) का चरम बिन्दु है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'टू-फ्रंट वॉर' – जब किसी देश पर दोनों सीमाओं (जैसे पश्चिम-पूर्व) से एक साथ सैन्य-दबाव डाला जाता है, तो वह या तो टूट जाता है (उच्छेद – जैसे नाज़ी जर्मनी) या समर्पण करता है (वश – जैसे जापान १९४५)। यही 'सैन्य-दबाव-सिद्धान्त' (Coercion theory) है।

श्लोक ५१ (सामान्य-मित्र को आत्मसात् करना)

श्लोक

सर्वोपायेन कुर्वीत सामान्यं मित्रमात्मसात् ।
भवन्ति मित्रादुच्छिन्नाः सुखोच्छेद्या हि विद्विषः ॥५१॥

IAST

Sarvopāyena kurvīta sāmānyaṃ mitramātmasāt |
Bhavanti mitrāducchinnāḥ sukhocchedyā hi vidviṣaḥ ||51||

शब्दार्थ
• सर्वोपायेन – समस्त उपायों (साम, दान, भेद, दण्ड) से
• कुर्वीत – करे
• सामान्यम् – सामान्य/तटस्थ राज्य
• मित्रम् – (उसे) मित्र

- आत्मसात् – अपने वश/अधीन कर ले
- भवन्ति – होते हैं
- मित्रात् – मित्र-सहायता से
- उच्छिन्नाः – विच्छिन्न/अलग-थलग
- सुखोच्छेद्याः – सुख (आसानी) से नाश-योग्य
- विद्विषः – शत्रु ।

भावार्थ

राजा को **समस्त उपायों (साम, दान, भेद, दण्ड)** के द्वारा **सामान्य (तटस्थ)** राज्य को **मित्र** बनाकर **अपने वश (आत्मसात्)** कर लेना चाहिए। क्योंकि जो शत्रु अपने मित्र-सहायता से विच्छिन्न (उच्छिन्नाः) हो जाते हैं, वे **आसानी से (सुख)** पराजित (उच्छेद्या) किए जा सकते हैं।

दार्शनिक विवेचन

'सर्वोपायेन' – अर्थशास्त्र के चार-उपाय (Sama, Dana, Bheda, Danda) का पूर्ण प्रयोग करके तटस्थ-शक्ति को अपने पक्ष में लाना। 'मित्रादुच्छिन्नाः' – शत्रु को उसके सहायक-नेटवर्क से अलग कर देना ही वास्तविक-विजय है। यह 'अलगाव-कूटनीति' (Isolation diplomacy) का सर्वोच्च सूत्र है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'तटस्थ-राष्ट्र-निराकरण' – जैसे शीत-युद्ध में भारत (तटस्थ) को अमेरिका/सोवियत द्वारा अपने-अपने पक्ष में लाने के लिए सर्वोपाय (सैन्य-सहायता, आर्थिक-अनुदान) का प्रयोग – तथा शत्रु (पाकिस्तान) को उसके मित्र (चीन/सऊदी) से अलग करने की रणनीति – इसी श्लोक पर आधारित है।

श्लोक ५२ (कारण-त्याग – शत्रुता-मूल-नाश)

श्लोक

कारणेनैव जायन्ते मित्राणि रिपवस्तथा ।
रिपवो येन जायेरन्कारणं तत्परित्यजेत् ॥५२॥

IAST

Kāraṇenaiva jāyante mitrāṇi ripavastathā |
Ripavo yena jāyeran kāraṇaṃ tat parityajet ||52||

शब्दार्थ

- कारणेन – किसी कारण/हेतु से
- एव – ही
- जायन्ते – उत्पन्न होते हैं

- मित्राणि – मित्र
- रिपवः – शत्रु
- तथा – इसी प्रकार
- रिपवः – शत्रु
- येन – जिस (कारण) से
- जायेरन् – उत्पन्न होते हैं
- कारणम् – उस कारण/मूल-नीति को
- परित्यजेत् – त्याग दे (समाप्त कर दे) ।

भावार्थ

जिस प्रकार किसी **कारण (हेतु)** से मित्र उत्पन्न होते हैं, **उसी प्रकार** शत्रु भी किसी कारण से ही उत्पन्न होते हैं। अतः राजा को **उस कारण** (जैसे अन्याय, अपमान, कर-अत्याचार, विश्वासघात) को **त्याग देना** (परित्यजेत्) चाहिए, जिससे शत्रु उत्पन्न होते हैं। मूल-कारण को हटाकर ही शत्रुता-निवारण संभव है।

दार्शनिक विवेचन

यह **'कार्य-कारण-शुद्धि' (Causality purification)** का सिद्धान्त है – शत्रु केवल 'लक्षण' (Symptom) है, 'कारण' (Root cause) उसका जनक है। जैसे चिकित्सा में रोग-लक्षण नहीं, मूल-रोग (Root disease) का नाश किया जाता है, वैसे ही राजनीति में शत्रु के बाह्य-रूप को नहीं, उसके उत्पत्ति-कारण (जैसे भू-राजनीतिक-विवाद, आर्थिक-असंतुलन) को समाप्त करना चाहिए। यह 'कारण-नाश' (Uprooting the cause) ही स्थायी-शांति का मार्ग है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'संघर्ष-समाधान' (Conflict Resolution) – शत्रुता के मूल-कारण (जैसे सीमा-विवाद, जल-वितरण, आतंकवाद-प्रायोजन) को दूर करना ही दीर्घकालीन शांति का आधार है। 'कारण-त्याग' ही 'सतत-विकास-लक्ष्य १६' (शांति, न्याय, मजबूत संस्थाएँ) का मूल है। केवल सैन्य-प्रहार (लक्षण-नाश) से समस्या का समाधान नहीं होता – जैसे आतंकवाद के विरुद्ध लड़ाई में उसके 'प्रायोजन-कारण' (गरीबी, अशिक्षा) को हटाना ही शाश्वत-समाधान है।

श्लोक ५३ (प्रजा-संरञ्जन – सम्पूर्ण-समृद्धि-मूल)

श्लोक

प्राधान्येन हि सर्वत्र सर्वाः संरञ्जयेत् प्रजाः ।
तासां संरञ्जनाद् राजा सर्वाङ्गीं श्रियम् अश्नुते ॥५३॥

IAST

Prādhānyena hi sarvatra sarvāḥ saṃrañjayet prajāḥ |
Tāsāṃ saṃrañjanād rājā sarvāṅgīṃ śriyam aśnute ||53||

शब्दार्थ

- प्राधान्येन – प्रधानतापूर्वक/विशेष रूप से
- सर्वत्र – सर्वत्र/सभी स्थानों पर
- सर्वाः – समस्त
- संरञ्जयेत् – संरञ्जित (प्रसन्न/तुष्ट) करे
- प्रजाः – प्रजा/जनता को
- तासाम् – उन (प्रजा) के
- संरञ्जनात् – संरञ्जन/तुष्टिकरण से
- राजा – राजा
- सर्वाङ्गीम् – समस्त-अंगों वाली (पूर्ण)
- श्रियम् – समृद्धि/ऐश्वर्य
- अश्नुते – प्राप्त करता है ।

भावार्थ

राजा को **सर्वत्र (हर जगह)** तथा **प्राधान्येन (विशेष रूप से)** समस्त **प्रजाओं** को संरञ्जित (प्रसन्न/तुष्ट) करना चाहिए। उन प्रजाओं के संरञ्जन (तुष्टिकरण) के फलस्वरूप राजा **सर्वाङ्गी (सम्पूर्ण)** समृद्धि (श्रियम्) को प्राप्त करता है – अर्थात् आर्थिक, सामाजिक, सैन्य, राजनयिक – सभी प्रकार की सम्पन्नता।

दार्शनिक विवेचन

यह **'लोक-संग्रह-सिद्धान्त'** (Welfare of the people) है – प्रजा-तुष्टि ही राज्य-समृद्धि का 'प्राधान्य' (मूल-हेतु) है। 'सर्वाङ्गी श्री' – जैसे शरीर के सभी अंग स्वस्थ हों, वैसे राज्य के सभी अंग (कोश, दण्ड, दुर्ग, मित्र) प्रजा-तुष्टि से स्वतः सम्पन्न हो जाते हैं। यह 'उपनिषदों' के 'प्रजा-धर्म' का राजनीतिक रूप है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'जन-कल्याणकारी राज्य' (Welfare State) – जिस सरकार की **जन-संतुष्टि (Public Satisfaction)** अधिक होती है, वहीं **वैश्विक-प्रतिष्ठा एवं आर्थिक-विकास** (सर्वाङ्गी श्री) प्राप्त करती है – जैसे स्कैंडिनेवियाई देशों की जन-कल्याण-नीति।

श्लोक ५४ (दूरस्थ-माण्डलिक-दुर्ग-वासियों का मित्रीकरण)

श्लोक

दूरेचरान् माण्डलिकांस् तथान्यान् दुर्गवासिनः ।
मित्रीकुर्वीत तत्प्राणाः साधयन्तीह मण्डलम् ॥५४॥

IAST

Dūrecarān māṇḍalikāṃs tathānyān durgavāsinaḥ |
Mitrīkurvīta tatprāṇāḥ sādhayantīha maṇḍalam ||54||

शब्दार्थ

- दूरेचरान् – दूर-देशों में विचरण करने वाले (दूरस्थ राजा)
- माण्डलिकान् – माण्डलिक (सामन्त/सहायक-राजा)
- तथा – तथा
- अन्यान् – अन्य
- दुर्गवासिनः – दुर्गों/किलों में निवास करने वाले (स्थानीय-शासक)
- मित्रीकुर्वीत – मित्र बनाए
- तत्प्राणाः – उन (मित्रों) के प्राण/सहायता से
- साधयन्ति – साधित/सम्पन्न करते हैं
- इह – इस (लोक/मण्डल) में
- मण्डलम् – मण्डल/राज्य-चक्र-विजय ।

भावार्थ

राजा को **दूर-देशों के राजाओं (दूरेचरान्), सामन्त/सहायक-राजाओं (माण्डलिकान्), तथा दुर्ग-निवासियों (दुर्गवासिनः)** – इन सबको **मित्र (मित्रीकुर्वीत)** बनाना चाहिए, क्योंकि इनकी सहायता (तत्प्राणाः) से इस मण्डल-विजय का कार्य सिद्ध होता है। ये सभी 'मण्डल-विजय' के प्राण-स्वरूप (जीवन-रेखा) हैं।

दार्शनिक विवेचन

'दूरेचरान् माण्डलिकान्' – ये 'बाह्य-परिधि' (Outer periphery) के शासक हैं; 'दुर्गवासिनः' – ये 'आन्तरिक-गढ़' (Inner forts) के अधिपति। इन सबको मित्र बनाना 'सर्व-दिग्विजय' (All-directional conquest) की पूर्व-शर्त है। 'तत्प्राणाः' – जैसे शरीर के प्राण सभी अंगों को चलाते हैं, वैसे ये मित्र-राज्य सम्पूर्ण मण्डल-अभियान को गतिशील बनाते हैं।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक कूटनीति में **'बफर-स्टेट्स' एवं 'रिमोट-अलाइज़'** (सुदूर-सहयोगी – जैसे ऑस्ट्रेलिया/जापान भारत के लिए), **'उप-क्षेत्रीय-सहयोगी'** (माण्डलिक – जैसे नेपाल/भूटान),

एवं **'सीमावर्ती-दुर्ग-प्रमुख'** (दुर्गवासी – जैसे सिक्किम/अरुणाचल के स्थानीय-नेता) – इन तीनों को मित्र बनाना ही किसी देश की 'सुरक्षा-उपस्थिति' (Strategic presence) सुनिश्चित करता है।

श्लोक ५५ (मध्यम-राजा के प्रति नीति – एकीभाव/नमन)

श्लोक

चलेच्चेदूर्जितबलो मध्यमो विजिगीषया ।
एकीभूयारिणा तिष्ठेदशक्तः सन्धिना नमेत् ॥५५॥

IAST

Calecced ūrjitabalo madhyamo vijigīṣayā |
Ekībhūyāriṇā tiṣṭhed aśaktaḥ sandhinā namet ||55||

शब्दार्थ
• चलेत् – आक्रमण/प्रस्थान करे
• चेत् – यदि
• ऊर्जितबलः – प्रबल-सेना वाला
• मध्यमः – मध्यम राजा
• विजिगीषया – विजय-इच्छा से
• एकीभूय – एक होकर/संयुक्त होकर
• अरिणा – शत्रु (अरि) के साथ
• तिष्ठेत् – खड़ा रहे/प्रतिरोध करे
• अशक्तः – अशक्त/कमजोर होने पर
• सन्धिना – संधि/सन्धि-समझौते से
• नमेत् – नमन/समर्पण/झुक जाए ।

भावार्थ
यदि **प्रबल-सेना (ऊर्जितबलः)** से युक्त **मध्यम राजा** विजय-इच्छा (विजिगीषया) से आक्रमण (चलेत्) करे, तो विजिगीषु को चाहिए कि **अपने शत्रु (अरिणा)** के साथ **एक होकर (एकीभूय)** उसका प्रतिरोध (तिष्ठेत्) करे; परन्तु यदि वह **अशक्त** (कमजोर) हो, तो **संधि (सन्धिना)** द्वारा उसके आगे **नमन (समर्पण)** करे।

दार्शनिक विवेचन

यह **'गठबन्धन-कूटनीति' (Alliance diplomacy)** का सूत्र है – प्रबल शत्रु (मध्यम) के विरुद्ध 'परस्पर-विरोधी शत्रु' (अरि) के साथ भी संयुक्त-मोर्चा बनाना उचित है। 'सन्धिना नमेत्' – आत्म-बल-

क्षीणता में 'सन्धि' (शान्ति-समझौता) एवं 'नमन' (दिखावटी-अधीनता) भी युद्ध-नीति का अंग है – क्योंकि असमय-युद्ध से अधिक हानि है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक भू-राजनीति – **मध्यम-शक्ति** (जैसे चीन) के आक्रमण पर **प्रतिद्वन्द्वी (अरि – जैसे पाकिस्तान)** के साथ भी **सामरिक-गठबन्धन** (जैसे भारत-पाक? किन्तु व्यावहारिक रूप से यह अत्यन्त दुर्लभ है, अत: सैद्धान्तिक रूप – ब्रिटेन-फ्रांस जर्मनी के विरुद्ध WW2 में एक हुए थे), या **'सन्धिना नमेत्'** – जैसे १९६२ के बाद भारत ने चीन के सामने कूटनीतिक-समर्पण नहीं किया, परन्तु **'तुष्टीकरण-नीति' (Appeasement)** का उदाहरण – १९३८ म्युनिख समझौता (अशक्तता में नमन) इसी श्लोक का आधुनिक चित्रण है।

श्लोक ५६ (उदासीन के विरुद्ध संघ-धर्म)

श्लोक

विजिगीषत्युदासीने सर्वे मण्डलिनः सह ।
सङ्घधर्मेण तिष्ठेयुः सन्नमेयुरशक्तयः ॥५६॥

IAST

Vijigīṣaty udāsīne sarve maṇḍalinaḥ saha |
Saṅghadharmeṇa tiṣṭheyuḥ sannameyur aśaktayaḥ ||56||

शब्दार्थ

- विजिगीषति – विजय-इच्छा करने पर
- उदासीने – उदासीन (बाह्य-प्रबल) राजा द्वारा
- सर्वे – समस्त
- मण्डलिनः – मण्डल-स्थित राजा
- सह – एक साथ
- सङ्घधर्मेण – संघ-धर्म (संघ/संयुक्त-संरक्षण-नीति) से
- तिष्ठेयुः – खड़े रहें/प्रतिरोध करें
- सन्नमेयुः – नमन/समर्पण करें
- अशक्तयः – अशक्त/कमजोर (होने पर) ।

भावार्थ

जब **उदासीन (बाह्य-प्रबल)** राजा विजय-इच्छा (विजिगीषति) करे, तो **सभी मण्डल-स्थित राजाओं (सर्वे मण्डलिनः)** को चाहिए कि वे **सह (संयुक्त)** होकर **संघ-धर्म** (सामूहिक-प्रतिरोध-नीति) से खड़े

रहें (प्रतिरोध करें); यदि वे **अशक्त** (सामूहिक रूप से भी कमजोर) हों, तो **नमन (सन्नमेयुः)** करें (समर्पण/संधि करें)।

दार्शनिक विवेचन

'उदासीन' – सबसे बाह्य एवं सबसे प्रबल। उसके विरुद्ध **'सङ्घ-धर्म'** (Collective security / Confederacy) ही एकमात्र विकल्प है – जैसे छोटे-छोटे राज्य मिलकर महान-आक्रामक का सामना करते हैं। यह **'वसुधैव-कुटुम्बकम्'** का नहीं, अपितु 'राज-संघ-सुरक्षा' (Security alliance) का व्यावहारिक रूप है। 'अशक्तयः सन्नमेयुः' – यह 'बल-विवेक' (Power-pragmatism) है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'संयुक्त-राष्ट्र' (UN)** या **'क्षेत्रीय-गठबन्धन' (जैसे ASEAN / SAARC)** – जब कोई बाहरी-महाशक्ति (उदासीन – जैसे चीन) दबाव बनाए, तो सभी क्षेत्रीय-देश (मण्डलिनः) 'संघ-धर्म' (Collective bargaining) द्वारा एकजुट होते हैं। अशक्तता में 'नमन' – जैसे कम्बोडिया ने वियतनाम के सामने ऐतिहासिक रूप से किया।

श्लोक ५७ (संघ-धर्म की परिभाषा – आपत्प्रतरण)

श्लोक

समुत्पन्नेषु कृच्छ्रेषु सम्भूय स्वार्थसिद्धये ।
आपत्प्रतरणं सम्यक् सङ्घधर्म इति स्थितिः ॥५७॥

IAST

Samutpanneṣu kṛcchreṣu sambhūya svārthasiddhaye |
Āpatprataraṇaṃ samyak saṅghadharma iti sthitiḥ ||57||

शब्दार्थ

- समुत्पन्नेषु – उत्पन्न होने पर
- कृच्छ्रेषु – संकटों/विपत्तियों में
- सम्भूय – एकत्र/संयुक्त होकर
- स्वार्थसिद्धये – अपने-अपने हित की सिद्धि के लिए
- आपत्प्रतरणम् – आपत्ति को पार करना/तरण
- सम्यक् – भलीभाँति
- सङ्घधर्मः – संघ-धर्म
- इति – इस प्रकार
- स्थितिः – स्थिति/नियम है ।

भावार्थ

जब **संकट (कृच्छ्रेषु)** उत्पन्न हों, तो **संयुक्त (सम्भूय)** होकर अपने-अपने हित (स्वार्थसिद्धये) के लिए **आपत्ति-तरण (आपत्प्रतरणम्)** करना ही **'संघ-धर्म'** (सामूहिक-सुरक्षा-नीति) कहलाता है – यही इसका स्थायी-नियम (स्थितिः) है।

दार्शनिक विवेचन

'स्वार्थसिद्धये' – संघ-धर्म 'परोपकार' पर नहीं, अपितु **'परस्पर-स्वार्थ' (Mutual self-interest)** पर आधारित है – जब सभी को एक समान खतरा हो, तो वे स्वतः एकजुट हो जाते हैं। 'आपत्प्रतरणम्' – आपत्ति-नौका (Crisis boat) को पार करना ही संघ-धर्म का सार है। यह 'यथार्थवादी-अन्तर्राष्ट्रीय-सम्बन्ध' (Realist IR) का मूल है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'जलवायु-परिवर्तन-गठबन्धन'** या **'कोविड-महामारी-सहयोग'** – जब वैश्विक-संकट (आपत्) उत्पन्न हो, तो राष्ट्र (स्वार्थसिद्धये) संयुक्त (सम्भूय) होकर आपत्ति-तरण (प्रतरण) करते हैं – यही आधुनिक **'संघ-धर्म'** (Global Public Goods) है।

श्लोक ५८ (शत्रु के दो प्रकार – सहज एवं कार्यज)

श्लोक

सहजः कार्यजश्चैव द्विविधः शत्रुरिष्यते ।
सहजः स्वकुलोत्पन्न इतरः कार्यजः स्मृतः ॥५८॥

IAST

Sahajaḥ kāryajaścaiva dvividhaḥ śatruriṣyate |
Sahajaḥ svakulotpanna itaraḥ kāryajaḥ smṛtaḥ ||58||

शब्दार्थ

- सहजः – सहज/प्राकृतिक/जन्मजात
- कार्यजः – कार्यज (कृत्रिम/परिस्थिति-जन्य)
- च – तथा
- एव – ही
- द्विविधः – दो-प्रकार का
- शत्रुः – शत्रु
- इष्यते – माना जाता है
- सहजः – सहज (जन्मजात) शत्रु

• स्वकुलोत्पन्नः – स्व-कुल में उत्पन्न (रक्त-सम्बन्धी/परिवार-जन्य)
• इतरः – दूसरा (कार्यज)
• कार्यजः – कार्यज (नीति/परिस्थिति से उत्पन्न)
• स्मृतः – कहा गया है ।

भावार्थ
शत्रु **दो प्रकार** के माने गये हैं – (१) **सहज (जन्मजात)** – जो **अपने ही कुल (स्वकुल)** में उत्पन्न होता है (जैसे पारिवारिक-प्रतिद्वन्द्वी, भाई-भतीजावादी-शत्रु), तथा (२) **कार्यज (कृत्रिम/परिस्थितिजन्य)** – जो विशिष्ट-नीति/कारणों से उत्पन्न होता है (जैसे युद्ध-प्रतिद्वन्द्वी, साम्राज्य-विस्तार-शत्रु)।

दार्शनिक विवेचन

'सहजः स्वकुलोत्पन्नः' – यह **'आन्तरिक-शत्रु' (Internal enemy)** है – जैसे सिंहासन-प्रतिद्वन्द्वी भाई, चचेरे-भाई – यह 'राज-वंश-संघर्ष' (Dynastic conflict) है। 'कार्यजः' – **'बाह्य-शत्रु' (External enemy)** – जो भू-राजनीति, व्यापार-विवाद, या साम्राज्य-विस्तार से उत्पन्न होता है। अर्थशास्त्र में 'सहज' अधिक खतरनाक माना गया है, क्योंकि वह अप्रत्याशित एवं अन्तरंग होता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक राजनीति में **'सहज-शत्रु'** – जैसे किसी देश में **'गृह-युद्ध-गुट'** या **'तख्तापलट-समूह'** (जो स्वयं देश के भीतर से उत्पन्न हो); **'कार्यज-शत्रु'** – जैसे **'पड़ोसी-प्रतिद्वन्द्वी'** (भारत-पाक, अमेरिका-चीन) जो नीतिगत-कारणों से शत्रु बनते हैं। 'सहज' को नियन्त्रित करना कठिन है।

श्लोक ५९ (शत्रु-वृत्त – चार उपाय)

श्लोक

उच्छेदनं चापचयः पीडनं कर्शनं तथा ।
इति विद्याविदः प्राहुः शत्रौ वृत्तं चतुर्विधम् ॥५९॥

IAST

Ucchedanaṃ cāpacayaḥ pīḍanaṃ karśanaṃ tathā |
Iti vidyāvidaḥ prāhuḥ śatrau vṛttaṃ caturvidham ||59||

शब्दार्थ
• उच्छेदनम् – उच्छेदन/पूर्ण-नाश/उखाड़-फेंक
• अपचयः – अपचय/क्षय/ह्रास/कमज़ोरी
• पीडनम् – पीड़न/दबाव/उत्पीड़न
• कर्शनम् – कर्शन/कृश-करण/दुर्बल-बनाना

- तथा – तथा
- इति – इस प्रकार
- विद्याविदः – नीति-विद्वान्
- प्राहुः – कहते हैं
- शत्रौ – शत्रु पर
- वृत्तम् – वृत्त/व्यवहार/आचरण
- चतुर्विधम् – चार-प्रकार का ।

भावार्थ

नीति-विद्वानों (विद्याविदः) ने शत्रु के प्रति **चार प्रकार के वृत्त (व्यवहार/उपाय)** बताए हैं – (१) **उच्छेदन** (पूर्ण-नाश), (२) **अपचय** (क्षय/ह्रास), (३) **पीडन** (पीड़न/दबाव), तथा (४) **कर्शन** (कृश-करण/दुर्बल-बनाना)। ये चारों क्रमिक-तीव्रता के उपाय हैं।

दार्शनिक विवेचन

ये चार **'शत्रु-निग्रह-कला' (Art of enemy suppression)** के सोपान हैं – 'उच्छेदन' (Annihilation) – सर्वाधिक कठोर, 'अपचय' (Attrition) – धीरे-धीरे क्षय, 'पीडन' (Harassment) – लगातार परेशानी, 'कर्शन' (Exhaustion) – शक्ति-क्षय-करण। यह 'अर्थशास्त्र' के 'शत्रु-षाड्गुण्य' (Six-fold policy) का विस्तार है – क्रमशः सबसे कठोर से सबसे सौम्य की ओर।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक 'अन्तर्राष्ट्रीय-प्रतिबन्ध' (International Sanctions) – **(१) उच्छेदन** (पूर्ण-आक्रमण/विध्वंस – जैसे इराक २००३), **(२) अपचय** (सैन्य-व्यय-कमी/हथियार-संधि), **(३) पीडन** (आर्थिक-प्रतिबन्ध/यात्रा-प्रतिबन्ध – जैसे ईरान), **(४) कर्शन** (कूटनीतिक-अलगाव/जासूसी-दबाव – जैसे उत्तर-कोरिया) – यही चार सोपान आधुनिक 'संकट-प्रबन्धन' (Crisis management) में उपयोग होते हैं।

श्लोक ६० (उच्छेदन एवं अपचय की परिभाषा)

श्लोक

उच्छेदनं तु विज्ञेयं सर्वप्रकृतिनाशनम् ।
नाशो योग्यनरादीनां बुधैरपचयः स्मृतः ॥६०॥

IAST

Ucchedanaṃ tu vijñeyaṃ sarvaprakṛtināśanam |
Nāśo yogyanarādīnāṃ budhairapacayaḥ smṛtaḥ ||60||

शब्दार्थ

- उच्छेदनम् – उच्छेदन
- विज्ञेयम् – जानना चाहिए
- सर्वप्रकृतिनाशनम् – समस्त-प्रकृतियों (राज्य-अंगों) का नाश
- नाशः – नाश
- योग्यनरादीनाम् – योग्य-पुरुषों एवं (सेना-मुख्य) आदि का
- बुधैः – बुद्धिमानों द्वारा
- अपचयः – अपचय (ह्रास)
- स्मृतः – कहा गया है ।

भावार्थ

उच्छेदन को **समस्त-प्रकृतियों (सप्त-अंगों – स्वामी, अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, कोश, दण्ड, मित्र)** का **पूर्ण-नाश (सर्वप्रकृतिनाशनम्)** समझना चाहिए। तथा **योग्य-पुरुषों (सेनापति, मन्त्रि, विद्वान्)** आदि का **नाश** (केवल उनका, न कि समग्र-अंगों का) बुद्धिमानों (बुधैः) ने **अपचय (क्षय/ह्रास)** कहा है।

दार्शनिक विवेचन

'सर्वप्रकृतिनाशनम्' – शत्रु के सम्पूर्ण राज्य-तन्त्र (सातों अंगों) को नष्ट कर देना – यह 'उच्छेदन' (राज्य-विध्वंस) है। 'योग्यनरादीनां नाशः' – केवल कुशल-सेनानियों, मंत्रियों, विद्वानों को मारना/हटाना – यह 'अपचय' (Weakening the leadership) है, जिससे शत्रु-राज्य तो रहता है, परन्तु उसकी कार्य-क्षमता नष्ट हो जाती है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक युद्ध में – **(१) 'उच्छेदन'** – पूरे देश पर कब्जा/विध्वंस (जैसे नाज़ी जर्मनी का १९४५ में पूर्ण-पतन), **(२) 'अपचय'** – 'डी-बाथिफिकेशन' (इराक में बाथ पार्टी के नेताओं को हटाना) या 'डी-नाज़ीफिकेशन' – केवल नेतृत्व-परत (योग्य-नर) को हटाकर शत्रु को अक्षम करना।

श्लोक ६१ (कर्शन एवं पीडन की परिभाषा)

श्लोक

रेचनं कोशदण्डाभ्यां महामात्रवधस्तथा ।
एतत्कर्शनमित्याहुराचार्याः पीडनं परम् ॥६१॥

IAST

Recanaṃ kośadaṇḍābhyāṃ mahāmātravadhastathā |
Etatkarśanamityāhurācāryāḥ pīḍanaṃ param ||61||

शब्दार्थ

- रेचनम् – रेचन/निकासी/खाली-करना
- कोशदण्डाभ्याम् – कोष (धन) एवं दण्ड (सेना) द्वारा
- महामात्रवधः – महामात्र (प्रधान-मन्त्री/सेनापति) का वध
- तथा – तथा
- एतत् – यह
- कर्शनम् – कर्शन (दुर्बल-करण)
- आचार्याः – आचार्य/नीति-विद्वान्
- पीडनम् – पीड़न
- परम् – परम/उत्कृष्ट (या अत्यधिक) ।

भावार्थ

(शत्रु के) कोष (खजाने) एवं दण्ड (सेना) को **रेचन (खाली/क्षीण)** करना, तथा **महामात्रों (प्रधान-मन्त्रियों/सेनापतियों)** का **वध** करना – इस संयुक्त-प्रक्रिया को आचार्यों ने **'कर्शन' (दुर्बल-करण)** कहा है; तथा यही **'पीडन' (दबाव/उत्पीड़न)** का **परम (अत्युत्तम/अत्यन्त-तीव्र)** रूप है।

दार्शनिक विवेचन

'रेचनम्' – जैसे चिकित्सा में 'विरेचन' (मल-शोधन) होता है, वैसे शत्रु के 'कोश' (धन) एवं 'दण्ड' (सेना) को रेचन (क्षीण/निकासी) करना। 'महामात्रवधः' – शत्रु के 'राज-सत्ता-स्तम्भ' (सेनापति, मंत्रि) को समाप्त करना। 'कर्शन' – शत्रु को 'कृश' (दुबला) बनाना, तथा 'पीडन' – उसे लगातार 'पीड़ा' देना।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'असममित-युद्ध' (Asymmetric warfare)** – **(१) आर्थिक-क्षरण** (कोश-रेचन – जैसे रूस पर प्रतिबन्धों से अर्थव्यवस्था कमजोर करना), **(२) सैन्य-क्षरण** (दण्ड-रेचन – जैसे यूक्रेन में रूसी सेना को थकावट-युद्ध से क्षीण करना), **(३) डिकैपिटेशन** (महामात्रवध – जैसे आतंकी-संगठनों के सरगनाओं को ड्रोन-हमलों से मारना) – यही 'कर्शन-पीडन' की आधुनिक-रणनीति है।

श्लोक ६२ (उच्छेदन-योग्य शत्रु के लक्षण)

श्लोक

समाश्रयविहीनो वा दुर्बलं वा समाश्रितः ।
शक्योऽरिः सम्पदा युक्त उच्छेत्तुं भूम्यनन्तरः ॥६२॥

IAST

Samāśrayavihīno vā durbalaṃ vā samāśritaḥ |
Śakyo'riḥ sampadā yukta ucchetuṃ bhūmyanantaraḥ ||62||

शब्दार्थ
- समाश्रयविहीनः – आश्रय (मित्र/दुर्ग) से रहित
- वा – अथवा
- दुर्बलम् – दुर्बल (आश्रय) पर आश्रित
- वा – अथवा
- समाश्रितः – आश्रित/स्थित हो
- शक्यः – समर्थ/योग्य/संभव
- अरिः – शत्रु
- सम्पदा – सम्पदा (धन/सेना) से
- युक्त – युक्त (होते हुए भी)
- उच्छेत्तुम् – उच्छेदन (नाश) करने के लिए
- भूम्यनन्तरः – भूमि-अनन्तर (समीप-स्थित/सीमावर्ती) ।

भावार्थ
आश्रय (मित्र-दुर्ग) से रहित (समाश्रयविहीन) अथवा **दुर्बल-आश्रय** पर निर्भर **समीप-स्थित (भूम्यनन्तरः)** शत्रु – चाहे वह **सम्पदा (धन/सेना)** से युक्त क्यों न हो – वह **उच्छेदन (पूर्ण-नाश)** के **योग्य (शक्यः)** होता है। आश्रय-हीनता उसे भेद्य बनाती है।

दार्शनिक विवेचन

'समाश्रय' – यह 'सुरक्षा-कवच' (Protective shield) है – या तो कोई प्रबल-मित्र (राजनयिक-आश्रय) या कोई अभेद्य-दुर्ग (भौतिक-आश्रय)। जिस शत्रु के पास यह 'कवच' नहीं, वह 'सम्पदा' (धन-बल) से युक्त होते हुए भी 'उच्छेद्य' (नाश-योग्य) होता है। 'भूम्यनन्तरः' – समीपवर्ती होना विशेष-लाभकारी है क्योंकि दूर-स्थ शत्रु पर आक्रमण करना कठिन होता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'अलग-थलग-राज्य' (Isolated states)** – जैसे उत्तर-कोरिया (आश्रय-रहित? किन्तु चीन/रूस से कुछ-कुछ आश्रित), या ईरान (प्रतिबन्धों में)। **'भूम्यनन्तरः'** – **सीमावर्ती-शत्रु** (जैसे

पाकिस्तान भारत के लिए) – जो सम्पदा-युक्त (परमाणु-बल) होते हुए भी, यदि अन्तर्राष्ट्रीय-आश्रय (समाश्रय) से हीन हो, तो वह 'उच्छेद्य' (नाश्य) होता है – जैसे १९७१ में पूर्वी-पाकिस्तान (बांग्लादेश) का उच्छेदन।

श्लोक ६३ (काल-कर्शन-पीडन एवं आश्रय-स्वरूप)

श्लोक

कर्शनं पीडनं काले कुर्वीताश्रयमानिनः ।
समाश्रयं दुर्गमाहुर्मित्रं वा साधुसम्मतम् ॥६३॥

IAST

Karśanaṃ pīḍanaṃ kāle kurvītāśrayamāninaḥ |
Samāśrayaṃ durgamāhurmitraṃ vā sādhusammatam ||63||

शब्दार्थ
• कर्शनम् – कर्शन (दुर्बल-करण)
• पीडनम् – पीड़न (दबाव)
• काले – उचित समय पर
• कुर्वीत – करे
• आश्रयमानिनः – आश्रय (सुरक्षा-स्थल) पर गर्व/निर्भर रखने वाले (शत्रु) पर
• समाश्रयम् – सम्यक् आश्रय/सुरक्षा-स्थल
• दुर्गम् – दुर्ग/किला
• आहुः – कहते हैं
• मित्रम् – मित्र/सहायक-राज्य
• वा – अथवा
• साधुसम्मतम् – सज्जनों/विद्वानों द्वारा सम्मत/स्वीकृत ।

भावार्थ
राजा को **आश्रय (सुरक्षा-स्थल)** पर **गर्व/निर्भर (आश्रयमानिनः)** रखने वाले शत्रु पर **उचित-समय (काले)** पर **कर्शन (दुर्बल-करण)** एवं **पीडन (दबाव)** करना चाहिए। **(उस शत्रु का) सम्यक् आश्रय (समाश्रयम्)** या तो **दुर्ग (किला)** होता है, अथवा **मित्र (सहायक-राज्य)** – यह सज्जनों (नीति-विद्वानों) का सम्मत-मत (साधुसम्मतम्) है।

दार्शनिक विवेचन

'आश्रयमानिनः' – जो शत्रु अपने 'आश्रय' (किला या शक्तिशाली-मित्र) पर अत्यधिक आश्रित/गर्वित होता है, उसी पर 'काले' (उचित अवसर – जब आश्रय अस्थिर हो) 'कर्शन' एवं 'पीडन' किया जाना चाहिए।

'दुर्ग' – भौतिक-आश्रय; 'मित्र' – राजनयिक-आश्रय। दोनों ही 'आश्रय' के प्रकार हैं – इन्हें तोड़कर ही शत्रु-विजय संभव है। यह 'अर्थशास्त्र' के 'आश्रय-भेदन' (Breach of shelter) का सिद्धान्त है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक सैन्य-रणनीति में – **(१) 'दुर्ग-भेदन'** – जैसे यूक्रेन में रूस द्वारा मारियुपोल (दुर्ग-नगर) को घेरना, **(२) 'मित्र-भेदन'** – जैसे अमेरिका द्वारा रूस के मित्र (जर्मनी/तुर्की) को कूटनीतिक-दबाव देकर अलग करना – यह दोनों 'आश्रय-भेदन' ही हैं। 'काले' (उचित-समय) – जैसे रूस-यूक्रेन युद्ध में आरम्भिक-चरण (जब पश्चिमी-सहायता पूरी नहीं आई थी) में कीव पर दबाव – 'समय' का चातुर्य ही सफलता-मूल है।

श्लोक ६४ (स्वजन-शत्रु - विभीषण एवं युधिष्ठिर-उदाहरण

श्लोक

विभीषणस्य सोदर्यस्तथा सूर्यसुतस्य च ।
सर्वतन्त्रापहारित्वात्तथोच्छेद्यो निजो रिपुः ॥६४॥

IAST

Vibhīṣaṇasya sodaryastathā sūryasutasya ca |

Sarvatantrāpahāritvāttathocchedyo nijo ripuḥ ||64||

शब्दार्थ

- विभीषणस्य - विभीषण (रावण-भ्राता) का
- सोदर्यः - सोदर/सगा भाई (रावण)
- सूर्यसुतस्य - सूर्य-पुत्र (कर्ण) का
- सर्वतन्त्रापहारित्वात् - समस्त-तन्त्र (राज्य-व्यवस्था) को अपहृत/विध्वंस करने की क्षमता के कारण
- तथा - इसी प्रकार
- उच्छेद्यः - उच्छेदन/नाश करने योग्य
- निजः - अपना ही
- रिपुः - शत्रु होता है ।

भावार्थ

स्पष्टीकरण: यहाँ 'विभीषणस्य सोदर्यः' (रावण) को 'निज-रिपु' (स्वजन-शत्रु) कहा गया है, क्योंकि रावण स्वयं विभीषण का सगा भाई था, किन्तु अधर्मी होने के कारण वह विभीषण के लिए शत्रु-तुल्य था। इसी प्रकार, 'सूर्यसुतस्य' (कर्ण) का स्वजन-शत्रु उसका जन्म-संकट अथवा दुर्योधन-मोह था, क्योंकि उसके ही कुल-सम्बन्धी (पाण्डव) उसके शत्रु थे। **तात्पर्य यह है कि कोई भी स्वजन (भाई, चचेरा-भाई) जो**

सम्पूर्ण राज्य-तन्त्र (सर्वतन्त्र) को अपहृत/नष्ट करने में समर्थ हो, वह सर्वाधिक खतरनाक होता है, क्योंकि वह राज्य के समस्त छिद्रों एवं कमजोरियों को जानता है। अतः आन्तरिक-शत्रु (निज-रिपु) का सर्वप्रथम उच्छेदन आवश्यक है।

दार्शनिक विवेचन

'विभीषणस्य सोदर्यः' – रावण (विभीषण का भाई) स्वयं विभीषण का 'निज-रिपु' था (धर्म-विरोधी)। 'सूर्यसुतस्य' – कर्ण का 'निज-रिपु' उसका स्वयं का 'अहं' अथवा दुर्योधन-मोह था। 'सर्वतन्त्रापहारित्वात्' – जो स्वजन सम्पूर्ण-तन्त्र को तोड़ सकता है (जैसे रावण ने लंका-तन्त्र को अधर्म-मार्गी बनाया), वह सबसे पहले नाश-योग्य है। यह 'आन्तरिक-शत्रु-प्राथमिकता' (Priority to internal enemy) का अर्थशास्त्रीय-सिद्धान्त है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक राष्ट्र-सुरक्षा में **'आन्तरिक-शत्रु' (Insider threat)** – जैसे **'देशद्रोही-तत्व' (Traitors)** या **'भ्रष्ट-अधिकारी' (Corrupt insiders)** – जो सम्पूर्ण-प्रशासनिक-तन्त्र (सर्वतन्त्र) को नष्ट कर सकते हैं, वे बाह्य-शत्रु से अधिक खतरनाक होते हैं (जैसे अमेरिका में एडवर्ड स्नोडेन या भारत में आंतरिक-आतंकवादी)।

श्लोक ६५ (अन्तर्गत-शत्रु – शुष्क-वृक्ष-अग्नि-उपमा)

श्लोक

छिद्रं कर्म च वित्तं च विजानाति निजो रिपुः ।
दहत्यन्तर्गतश्चैव शुष्कं वृक्षमिवानलः ॥६५॥

IAST

Chidraṃ karma ca vittaṃ ca vijānāti nijo ripuḥ |
Dahatyantargataścaiva śuṣkaṃ vṛkṣamivānalaḥ ||65||

शब्दार्थ

- छिद्रम् – कमजोरियाँ/दोष/रिक्तता
- कर्म – कार्य-योजनाएँ/क्रियाकलाप
- वित्तम् – धन/कोष-स्थिति
- विजानाति – जानता है
- निजः – अपना ही
- रिपुः – शत्रु
- दहति – जला देता है

- अन्तर्गतः – भीतर प्रविष्ट
- शुष्कम् – सूखा
- वृक्षम् – वृक्ष
- इव – समान
- अनलः – अग्नि ।

भावार्थ
अपना ही शत्रु (निज रिपु) राज्य के **छिद्र (कमजोरियाँ), कर्म (योजनाएँ), तथा वित्त (धन-स्थिति)** – सबको **भलीभाँति जानता** है। तथा **भीतर घुसा हुआ (अन्तर्गतः)** वह शत्रु **सूखे वृक्ष को अग्नि** के समान सम्पूर्ण राज्य को जला देता है। अन्तरंग-शत्रु ही सबसे घातक होता है।

दार्शनिक विवेचन

'छिद्रम्' – राज्य की 'शून्य-स्थान' (Vulnerabilities) – जैसे सेना-कमी, भ्रष्टाचार, आपसी-फूट। 'अन्तर्गतः' – भीतर घुसा शत्रु (जासूस, विद्रोही, द्रोही) 'शुष्क-वृक्ष-अग्नि' की भाँति – बाहर से तो वृक्ष सूखा (कमजोर) दिखता है, परन्तु भीतर की अग्नि (शत्रु) उसे पल-भर में भस्म कर देती है। यह 'सुरक्षा-भेदन' (Infiltration) का सिद्धान्त है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'सायबर-सुरक्षा' (Cyber security)** – कोई **'इनसाइडर-थ्रेट'** (हैकर/कर्मचारी) जो कम्पनी के पासवर्ड (छिद्र), प्रोजेक्ट-योजनाएँ (कर्म), तथा वित्तीय-लेन-देन (वित्त) जानता है, वह **'रैनसमवेयर'** (अग्नि) से पूरे-तन्त्र (वृक्ष) को नष्ट कर सकता है – जैसे २०२३ में कुछ बड़ी-कम्पनियों के डेटा-रिसाव।

श्लोक ६६ (प्रबल-शत्रु-युद्ध में आत्म-ह्रास-चिन्ता)

श्लोक

बलिना विगृहीतस्य जिगीषुः कृच्छ्रवर्तिनः ।
कुर्वीतोपचयं शत्रोरात्मोच्छित्तिविशङ्कया ॥६६॥

IAST

Balinā vigṛhītasya jigīṣuḥ kṛcchravartinaḥ |
Kurvītopacayaṃ śatrorātmocchittiviśaṅkayā ||66||

शब्दार्थ
- बलिना – प्रबल (शत्रु) से
- विगृहीतस्य – युद्ध/संघर्ष करने वाले

- जिगीषुः – विजय-इच्छुक राजा
- कृच्छ्रवर्तिनः – संकट में स्थित/विचलित
- कुर्वीत – करे
- उपचयम् – उपचय/संवर्धन/बढ़ाना
- शत्रोः – शत्रु का
- आत्मोच्छित्तिविशङ्कया – आत्म-उच्छित्ति (अपने नाश) की आशंका से ।

भावार्थ

प्रबल शत्रु के साथ **संघर्ष (विगृहीतस्य)** करते समय यदि **विजिगीषु संकट-ग्रस्त (कृच्छ्रवर्ती)** हो, तो उसे **अपने (आत्म) नाश की आशंका (उच्छित्ति-विशङ्कया)** से **शत्रु का उपचय (विकास/बल-वृद्धि)** करना चाहिए – अर्थात् अस्थायी रूप से शत्रु को साधन-सामग्री देकर अपनी रक्षा करे, जिससे वह तत्काल आक्रमण न करे।

दार्शनिक विवेचन

'शत्रोरुपचयम्' – विरोधाभासी-नीति (Paradoxical policy) – जब आप कमजोर हों, तो शत्रु की 'क्षमता-वृद्धि' (तुष्टीकरण/बलिदान) करके भी उसे रोका जा सकता है, ताकि वह आपको नष्ट न करे। यह 'आत्म-रक्षा-हेतु-बलिदान' (Self-preservation by appeasement) है – जैसे शुक्रनीति का 'जीवित-रहने-हेतु-सन्धि' सिद्धान्त।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'तुष्टीकरण-नीति' (Appeasement)** – १९३८ में चेकोस्लोवाकिया को हिटलर को सौंपना (शत्रोरुपचय) – उस समय ब्रिटेन/फ्रांस 'आत्म-रक्षा-विशंकया' (स्वयं के नाश के डर) से ऐसा किया, परन्तु यह अल्प-कालीन-समाधान था (यथा इतिहास में म्युनिख-संधि का परिणाम) – यही इस श्लोक की चेतावनी है।

श्लोक ६७ (एक-शत्रु-नाश पर दूसरा-शत्रु-आगमन)

श्लोक

यस्मिन्नुच्छिद्यमाने तु रिपुरन्यः प्रवर्तते ।
न तस्योच्छित्तिमातिष्ठेत्कुर्वीतैनं स्वगोचरम् ॥६७॥

IAST

Yasminnucchidyamāne tu ripuranyaḥ pravartate |
Na tasyocchittimātiṣṭhet kurvītainaṃ svagocaram ||67||

शब्दार्थ

- यस्मिन् – जिस (शत्रु) के
- उच्छिद्यमाने – नाश/उच्छेद किए जाने पर
- रिपुः – दूसरा शत्रु
- अन्यः – अन्य
- प्रवर्तते – उत्पन्न/प्रकट हो जाता है
- न – नहीं
- तस्य – उस (पहले शत्रु) का
- उच्छित्तिम् – पूर्ण-नाश
- आतिष्ठेत् – करे
- कुर्वीत – करे
- एनम् – उसे
- स्वगोचरम् – अपने गोचर/अधीन/प्रभाव-क्षेत्र में रखे ।

भावार्थ

यदि किसी शत्रु के **नाश (उच्छिद्यमाने)** करने पर **कोई दूसरा शत्रु (रिपुरन्यः)** उत्पन्न हो जाता है, तो उस (पहले) शत्रु का **पूर्ण-नाश (उच्छित्तिम्)** नहीं करना चाहिए, अपितु **उसे अपने वश/अधीन (स्वगोचरम्)** में रखना चाहिए (क्योंकि वह दूसरे, अधिक-खतरनाक शत्रु को रोकने में सहायक हो सकता है)।

दार्शनिक विवेचन

यह **'संतुलन-कूटनीति' (Balance of power)** का श्रेष्ठ सूत्र है – कभी-कभी एक दुर्बल-शत्रु को जीवित रखना उचित होता है, क्योंकि वह दूसरे, अधिक-प्रबल शत्रु के लिए 'अवरोधक' (Buffer) का कार्य करता है। 'स्वगोचरम्' – उसे पूर्णतः न मारकर, अपने 'प्रभाव-क्षेत्र' (Influence zone) में रखना।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'प्रॉक्सी-वॉर' (Proxy war)** – अमेरिका ने शीत-युद्ध में पाकिस्तान (शत्रु-१) को पूर्णतः नष्ट नहीं किया, क्योंकि वह सोवियत-संघ (शत्रु-२) के विरुद्ध 'स्वगोचर' (सहयोगी-क्षेत्र) में था। इसी प्रकार, तालिबान को नष्ट न करके उन्हें 'अल-कायदा' के विरुद्ध प्रयोग करना – यह 'रिपुरन्यः-प्रवर्तते' का व्यावहारिक-रूप है।

श्लोक ६८ (वंशगत-दुरवग्रह-शत्रु का दमन)

श्लोक

वंशगतो रिपुर्यश्च विचलेद्दुरवग्रहः ।
तस्य संयमनायाशु तत्कुलीनं समुन्नयेत् ॥६८॥

IAST

Vaṃśagato ripuryaśca vicaleddūravagrahaḥ |
Tasya saṃyamanāyāśu tatkulīnaṃ samunnayet ||68||

शब्दार्थ

- वंशगतः – वंश-परम्परा में आया हुआ (पैतृक-शत्रु)
- रिपुः – शत्रु
- यः – जो
- विचलेत् – विचलित/उत्तेजित/विद्रोह-प्रवृत्त हो
- दुरवग्रहः – दुष्ट-अवग्रह (बुरा-आग्रह/दुर्निवार-उद्दण्डता) वाला
- तस्य – उस (शत्रु) के
- संयमनाय – संयम/नियन्त्रण/दमन के लिए
- आशु – शीघ्र/तुरन्त
- तत्कुलीनम् – उसी-कुल का (कोई अन्य) व्यक्ति
- समुन्नयेत् – ऊँचा उठाए/प्रतिष्ठित करे/खड़ा करे ।

भावार्थ

जो **वंश-परम्परागत शत्रु (पैतृक-प्रतिद्वन्द्वी) उद्दण्ड/विद्रोही (दुरवग्रह)** होकर **विचलित (उत्तेजित)** हो जाए, तो उसके **संयमन (नियन्त्रण)** के लिए **शीघ्र (आशु)** उसी-कुल के किसी अन्य (निष्ठावान) व्यक्ति (तत्कुलीनम्) को **प्रतिष्ठित (समुन्नयेत्)** करना चाहिए – ताकि कुल-प्रतिष्ठा एवं वैधानिक-दावे से शत्रु-विद्रोह दब जाए।

दार्शनिक विवेचन

'वंशगतः' – यह 'राजवंशीय-प्रतिद्वन्द्वी' (Dynastic rival) है – जैसे भाई-भतीजा-विद्रोह। 'तत्कुलीनं समुन्नयेत्' – उसी कुल के किसी दूसरे (प्रतिद्वन्द्वी-भाई के स्थान पर उसके पुत्र/अन्य-सम्बन्धी) को सत्ता-प्रदान करके विद्रोह-मूल को ही समाप्त करना – यह 'राज-वंश-कूटनीति' (Dynastic diplomacy) है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'सत्ता-संकट'** में – जैसे किसी देश में यदि कोई **'राजनीतिक-वंशज'** (परिवार-सदस्य) विद्रोही हो, तो उसी-परिवार के किसी अन्य (अधिक-वफादार) सदस्य को ऊँचा पद देकर (जैसे जापानी-

शाही-परिवार में) संकट-शमन – या कम्पनी-बोर्ड में **'प्रॉमिनेंट-फ़ैमिली-मेम्बर'** को नियुक्त करके वंश-संघर्ष-नियन्त्रण।

श्लोक ६९ (विष-विषेण, वज्र-वज्रेण – समान-बल-नाश-नीति)

श्लोक

विषं विषेण व्यथते वज्रं वज्रेण भिद्यते ।
गजेन्द्रो दृष्टसारेण गजेन्द्रेनैव वध्यते ॥६९॥

IAST

Viṣaṃ viṣeṇa vyathate vajraṃ vajreṇa bhidyate |
Gajendro dṛṣṭasāreṇa gajendrenaiva vadhyate ||69||

शब्दार्थ
• विषम् – जहर/विष
• विषेण – विष (जहर) से ही
• व्यथते – व्यथित/नष्ट होता है
• वज्रम् – वज्र (हीरा/वज्रास्त्र)
• वज्रेण – वज्र (कठोर-वस्तु) से ही
• भिद्यते – भेदन/टूटता है
• गजेन्द्रः – श्रेष्ठ-हाथी
• दृष्टसारेण – जिसका सार (सामर्थ्य/दाँत) परखा हो
• गजेन्द्रेण – (उसी-कोटि के) श्रेष्ठ-हाथी द्वारा
• वध्यते – मारा/नष्ट किया जाता है ।

भावार्थ
विष का नाश **विष** से ही होता है; **वज्र** का भेदन **वज्र** से ही होता है; तथा **श्रेष्ठ-हाथी** की मृत्यु (वध) **परीक्षित-सामर्थ्य वाले (दृष्टसारेण) दूसरे श्रेष्ठ-हाथी** द्वारा ही होती है। अर्थात् शत्रु-नाश हेतु **समान-शक्ति/समान-प्रकृति** के साधन का ही प्रयोग करना चाहिए।

दार्शनिक विवेचन

यह **'सम-प्रतिरोध-सिद्धान्त' (Equivalent resistance)** है – केवल 'समान-गुण' वाला ही समान-गुण को नष्ट कर सकता है। यह 'प्रतिकार-साम्य' (Symmetry in counteraction) का नियम है – जैसे चिकित्सा में 'विष-विषेण' (होम्योपैथी का 'सिमिलिया-सिमिलिबस')। यह अर्थशास्त्र का 'प्रति-शक्ति-नियोजन' (Deploying counter-force) है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'सैन्य-समकक्षता' (Military parity)** – किसी देश के परमाणु-हथियार (वज्र) का मुकाबला केवल दूसरे देश के परमाणु-हथियार (वज्रेण) से ही संभव (MAD – Mutually Assured Destruction); आतंकवाद (विष) का मुकाबला उसी-तरह की 'प्रति-आतंकी-कोशिका' (विषेण) से; तथा भारी-हाथी-टैंकों का मुकाबला समान-श्रेणी-टैंकों से – यही 'सम-प्रतिकार' (Proportional response) है।

श्लोक ७० (मत्स्य-न्याय एवं राम-विभीषण-उदाहरण)

श्लोक

मत्स्यो मत्स्यमुपादत्ते ज्ञातिर्ज्ञातिमसंशयम् ।
रावणोच्छित्तये रामो विभीषणमपूजयत् ॥७०॥

IAST

Matsyo matsyamupādatte jñātirjñātimasaṃśayam |

Rāvaṇocchittaye rāmo vibhīṣaṇamapūjayat ||70||

शब्दार्थ

• मत्स्यः - एक मछली
• मत्स्यम् - दूसरी मछली को
• उपादत्ते - ग्रहण/खाती है
• ज्ञातिः - स्वजन
• ज्ञातिम् - स्वजन को
• असंशयम् - निस्संदेह
• रावणोच्छित्तये - रावण के उच्छेदन/नाश के लिए
• रामः - भगवान राम
• विभीषणम् - विभीषण (रावण-भ्राता) को
• अपूजयत् - पूजित/सम्मानित किया ।

भावार्थ

(मत्स्य-न्याय) - "मत्स्यो मत्स्यमुपादत्ते" का अर्थ है 'बड़ी मछली छोटी मछली को खाती है' अर्थात् प्रकृति में बलवान् दुर्बल का नाश करता है। राजनीति में इस सिद्धान्त का व्यावहारिक रूप यह है कि स्वजन (ज्ञाति) ही स्वजन को नष्ट कर सकता है, क्योंकि वह आन्तरिक कमजोरियों को भली-भाँति जानता है। राम ने विभीषण (रावण का भाई) को पूजित (सम्मानित) करके रावण-तन्त्र का आन्तरिक-भेदन किया, जो 'ज्ञाति-द्वारा-ज्ञाति-नाश' का उत्कृष्ट उदाहरण है।

दार्शनिक विवेचन

यह **'स्वजन-भेदन-नीति' (Divide and rule among relatives)** का उत्कृष्ट-उदाहरण है – 'मत्स्यो मत्स्यम्' (बड़ी मछली छोटी को खाती है) – शक्ति-संतुलन में स्वजन ही स्वजन का नाश करता है। राम ने विभीषण (स्वयं रावण का भाई) को पूजित (सम्मानित) करके रावण-तन्त्र को आन्तरिक-रूप से तोड़ा। यह 'भेद-नीति' का 'ज्ञाति-प्रयोग' (Using kin against kin) है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'परिवार-व्यवसाय-संघर्ष'** या **'राजवंशीय-कूटनीति'** – किसी शासक-परिवार के विद्रोही-सदस्य (जैसे शाह-ईरान के पुत्र) को सम्मानित करके विरोधी-शासन (जैसे खुमैनी) को कमजोर करना; या कम्पनी-बोर्ड में **'विद्रोही-संस्थापक-परिवार-सदस्य'** को शामिल करके आन्तरिक-विद्रोह-शमन – यही 'विभीषण-नीति' का आधुनिक-रूप है।

श्लोक ७१ (मण्डल-संक्षोभ-त्याग एवं प्रकृति-संरञ्जन)

श्लोक

यस्मिन्मण्डलसंक्षोभः कृते भवति कर्मणि ।
न तत्कुर्वीत मेधावी प्रकृतीरनुरञ्जयेत् ॥७१॥

IAST

Yasmin maṇḍalasaṃkṣobhaḥ kṛte bhavati karmaṇi |
Na tatkurvīta medhāvī prakṛtīranurañjayet ||71||

शब्दार्थ

• यस्मिन् – जिस (कार्य) में
• मण्डलसंक्षोभः – मण्डल (राज्य-समूह/अंगों) में संक्षोभ (उथल-पुथल/अशान्ति)
• कृते – करने पर
• भवति – होती है
• कर्मणि – कार्य में
• न – नहीं
• तत् – वह
• कुर्वीत – करे
• मेधावी – बुद्धिमान राजा
• प्रकृतीः – प्रकृतियों (राज्य-अंगों) को
• अनुरञ्जयेत् – संरञ्जित (प्रसन्न/तुष्ट) करे ।

भावार्थ
जिस **कार्य (कर्मणि)** को करने पर **मण्डल (सम्पूर्ण राज्य-व्यवस्था/अंगों)** में **संक्षोभ (अशान्ति/उथल-पुथल)** उत्पन्न हो, उस कार्य को **बुद्धिमान (मेधावी)** राजा **कभी न करे**; अपितु वह **प्रकृतियों (सप्त-अंगों)** को **संरञ्जित (तुष्ट/प्रसन्न)** करने में लगे। राज्य-स्थिरता ही सर्वोच्च-प्राथमिकता है।

दार्शनिक विवेचन

'मण्डलसंक्षोभः' – अत्यन्त-महत्वपूर्ण चेतावनी – कोई भी नीति-निर्णय (जैसे युद्ध, बड़ा-कर-वृद्धि, आक्रामक-आर्थिक-सुधार) जो 'मण्डल' (अमात्य, राष्ट्र, कोश, दण्ड, दुर्ग, मित्र) में अस्थिरता लाए, वह कदापि न करें। 'प्रकृतीरनुरञ्जयेत्' – सबसे पहले आन्तरिक-तुष्टि (Internal harmony) ही विजय-मार्ग है। यह 'शान्ति-प्राधान्य' (Primacy of peace) का सिद्धान्त है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'शासन-स्थिरता' (Political stability)** – कोई भी सुधार (जैसे जीएसटी, नोटबन्दी, कृषि-कानून) जो सम्पूर्ण-तन्त्र (मण्डल) में 'संक्षोभ' (हड़ताल, विरोध, अर्थव्यवस्था-ह्रास) लाए, उसे 'समय-चातुर्य' से क्रमबद्ध-रूप से करना चाहिए, अथवा पहले जनता (प्रकृति) को तैयार करना (अनुरञ्जन) – जैसे 'पायलट-प्रोजेक्ट' (Pilot project) पहले चलाना।

श्लोक ७२ (स्व-प्रकृति-अनुरञ्जन एवं पर-प्रकृति-भेदन)

श्लोक

साम्ना दानेन मानेन प्रकृतीरनुरञ्जयेत् ।
आत्मीया भेददण्डाभ्यां परकीयास्तु भेदयेत् ॥७२॥

IAST

Sāmnā dānena mānena prakṛtīranurañjayet |
Ātmīyā bhedadaṇḍābhyāṃ parakīyāstu bhedayet ||72||

शब्दार्थ
- साम्ना – साम (मैत्री/सौहार्द) से
- दानेन – दान (उपहार/अनुदान) से
- मानेन – मान (सम्मान/आदर) से
- प्रकृतीः – प्रकृतियों (अपने राज्य-अंगों) को
- अनुरञ्जयेत् – संरञ्जित/तुष्ट करे
- आत्मीयाः – अपने (प्रकृतियाँ)

- भेददण्डाभ्याम् – भेद (विभाजन) एवं दण्ड (शक्ति/दमन) से
- परकीयाः – दूसरे (शत्रु-राज्य) की प्रकृतियाँ
- भेदयेत् – विभाजित/तोड़े ।

भावार्थ
राजा को **अपनी प्रकृतियों (सप्त-अंगों)** को **साम (सौहार्द), दान (अनुदान), तथा मान (सम्मान)** – इन तीनों से **संरञ्जित (तुष्ट/प्रसन्न)** करना चाहिए; तथा **शत्रु-राज्य की प्रकृतियों** को **भेद (विभाजन)** एवं **दण्ड (शक्ति-प्रदर्शन)** से **भेदित (विभाजित/तोड़)** करना चाहिए। आत्म-बल-वर्धन एवं शत्रु-विघटन – दोनों आवश्यक हैं।

दार्शनिक विवेचन

'साम, दान, मान' – ये तीन 'सौम्य-उपाय' (Conciliatory means) हैं – स्व-पक्ष को एकजुट करने के लिए। 'भेद, दण्ड' – ये दो 'तीव्र-उपाय' (Harsh means) हैं – पर-पक्ष को तोड़ने के लिए। यह 'साम-दान-भेद-दण्ड' (चतुर्विध-उपाय) का ही विभाजन है – 'स्व-पक्ष' (3 सौम्य) एवं 'पर-पक्ष' (2 तीव्र)। यह 'अर्थशास्त्र' का 'आत्म-उत्कर्ष-शत्रु-क्षय' (Self-enhancement & enemy attrition) सिद्धान्त है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'राजनय' (Diplomacy)** – अपने देश की जनता/सेना (प्रकृति) को **'अनुदान-योजनाएँ, सम्मान-नीति'** (जैसे सब्सिडी, पद-सम्मान) से तुष्ट करना; तथा शत्रु-राष्ट्र को **'सूचना-भेद' (जासूसी), 'कूटनीतिक-अलगाव', 'प्रतिबन्ध' (दण्ड)** से तोड़ना – यही अमेरिका/चीन की आधुनिक-रणनीति है।

श्लोक ७३ (सर्व-स्वार्थ-परता – मध्यस्थता-अभाव)

श्लोक

आकीर्णं मण्डलं सर्वं मित्रैररिभिरेव च ।
सर्वः स्वार्थपरो लोकः कुतो मध्यस्थता क्वचित् ॥७३॥

IAST

Ākīrṇaṃ maṇḍalaṃ sarvaṃ mitrairaribhireva ca |
Sarvaḥ svārthaparo lokaḥ kuto madhyasthatā kvacit ||73||

शब्दार्थ
- आकीर्णम् – आकीर्ण/भरा हुआ
- मण्डलम् – यह राज्य-चक्र
- सर्वम् – सम्पूर्ण
- मित्रैः – मित्रों से

- अरिभिः – शत्रुओं से
- एव – ही
- च – तथा
- सर्वः – समस्त
- स्वार्थपरः – स्व-हित-परायण
- लोकः – संसार
- कुतः – कहाँ
- मध्यस्थता – तटस्थता/निष्पक्षता
- क्वचित् – कहीं (भी) ।

भावार्थ

यह सम्पूर्ण **मण्डल (राज्य-चक्र)** केवल **मित्रों** एवं **शत्रुओं** से ही **आकीर्ण (भरा)** है (तटस्थ कोई नहीं)। **समस्त लोक (संसार) स्वार्थ-परायण (स्वार्थपरः)** है; **तो फिर कहीं (कुतः) कहाँ (क्वचित्) मध्यस्थता (तटस्थता/निष्पक्षता)** है? अर्थात् यथार्थ में कोई पूर्ण-तटस्थ नहीं, सबका अपना-स्वार्थ है।

दार्शनिक विवेचन

यह **'अन्तर्राष्ट्रीय-यथार्थवाद' (International Realism)** का सर्वोत्कृष्ट सूत्र है – 'आकीर्णं मण्डलम्' – पूरा भू-राजनीतिक-क्षेत्र या तो मित्र है या शत्रु, 'मध्यस्थ' केवल 'दिखावटी' (कूटनीतिक-भाषा) है। 'सर्वः स्वार्थपरः' – हॉब्स का 'युद्ध-सर्व-विरुद्ध-सर्व' (State of nature) – यहाँ 'मध्यस्थता' (Neutrality) व्यावहारिक-स्वार्थ-गणना का एक रूप है, वास्तविक-निष्पक्षता नहीं। यह 'मैकियावेली' से हजारों-वर्ष पूर्व का यथार्थ-दर्शन है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'शीत-युद्ध'** (Cold War) – अमेरिका-सोवियत-संघ (मित्र/शत्रु) के बीच 'तटस्थ-देश' (गुटनिरपेक्ष) भी वास्तव में 'स्वार्थपर' थे (सहायता-लोभ)। आज का **'गठबन्धन-राजनीति'** (QUAD, BRICS) – प्रत्येक-देश स्वार्थपर; 'मध्यस्थता' (जैसे UN) कूटनीतिक-माध्यम मात्र है – यही इस श्लोक की शाश्वत-सत्यता है।

श्लोक ७४ (मित्र-विकृत-दमन एवं अत्यन्त-पापी-शत्रु-नाश)

श्लोक

भोगप्राप्तं विकुर्वाणं मित्रमप्यवपीडयेत् ।
अत्यन्तविकृतं हन्यात्स पापीयान्रिपुर्मतः ॥७४॥

IAST

Bhogaprāptaṃ vikurvāṇaṃ mitramapyavapīḍayet |
Atyantavikṛtaṃ hanyāt sa pāpīyānripurmataḥ ||74||

शब्दार्थ

- भोगप्राप्तम् – भोग/सुख/पद/सम्पदा प्राप्त किये हुए
- विकुर्वाणम् – विकृत/विरुद्ध-आचरण/विद्रोही होते हुए
- मित्रम् – मित्र को
- अपि – भी
- अवपीडयेत् – दबाए/पीड़ित करे
- अत्यन्तविकृतम् – अत्यन्त-विकृत/पूर्ण-विद्रोही को
- हन्यात् – मारे/नष्ट करे
- सः – वह
- पापीयान् – अत्यन्त-पापी
- रिपुः – शत्रु
- मतः – माना जाता है ।

भावार्थ

यदि कोई **मित्र (सहायक) भोग-प्राप्ति (सुख/पद/सत्ता)** के पश्चात् **विकृत (विद्रोही/अनुचित-आचरण)** हो जाए, तो उसे **दबाना (अवपीडयेत्)** चाहिए; तथा जो **अत्यन्त-विकृत (पूर्ण-विद्रोही/अधर्मी)** हो जाए, उसे **मार (नाश)** देना चाहिए – क्योंकि वह **पापीयान् (अत्यन्त-पापी)** शत्रु (रिपुः) माना जाता है। विश्वासघाती-मित्र शत्रु से भी अधिक घातक होता है।

दार्शनिक विवेचन

'भोगप्राप्तम्' – जो मित्र सत्ता/धन-प्राप्ति के बाद अहंकारी/द्रोही हो जाता है (जैसे कंस ने वसुदेव का साथ छोड़ा)। 'विकुर्वाणम्' – उसे 'अवपीडयेत्' (दबाव/प्रतिबन्ध) – पहले सौम्य-दण्ड; 'अत्यन्तविकृतम्' – यदि वह पूर्णतः विद्रोही हो, तो 'हन्यात्' (नाश) – क्योंकि 'स पापीयान् रिपुः' – विश्वासघाती-मित्र ही सबसे बड़ा 'पापी-शत्रु' होता है। यह 'मित्र-द्रोह-दण्ड' (Punishment for treacherous friend) का कठोर-सिद्धान्त है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'गठबन्धन-विश्वासघात' (Alliance betrayal)** – यदि कोई सहयोगी-देश (जैसे तुर्की – नाटो में रहकर रूस से S-400 खरीदना) 'विकृत' हो, तो उसे प्रतिबन्धों (अवपीडन) से दबाना; तथा यदि वह 'अत्यन्त-विकृत' (जैसे हिटलर के साथ स्टालिन की १९४१ में हुई – किन्तु वह शत्रु-पक्ष था), अथवा कॉर्पोरेट-जगत में **'ट्रस्टेड-पार्टनर'** (कम्पनी) का **'धोखाधड़ी'** (Fraud) करना – तो उसे **'ब्लैकलिस्ट'** (नाश-तुल्य) करना – यही 'पापीयान् रिपु' का आधुनिक-न्याय है।

श्लोक ७५ (उभयात्मक-मित्र – वज्री-त्रिशिरः-न्याय)

श्लोक

वर्तते पक्षपातेन मित्रं चेदुभयात्मकम् ।
वज्रीव हि त्रिशिरसं तदुच्छिन्द्यात्कृतत्वरः ॥७५॥

IAST

Vartate pakṣapātena mitraṃ ced ubhayātmakam |
Vajrīva hi triśirasaṃ tad ucchindyāt kṛtatvaraḥ ||75||

शब्दार्थ

- वर्तते – स्थित/व्यवहार करता है
- पक्षपातेन – पक्षपात/पूर्वाग्रह से
- मित्रम् – मित्र
- चेत् – यदि
- उभयात्मकम् – दोनों (शत्रु-मित्र) पक्षों का
- वज्री – इन्द्र (वज्रधारी)
- त्रिशिरसं – त्रिशिरा (तीन-सिर वाला दैत्य) को
- उच्छिन्द्यात् – उच्छेद/नाश करे
- कृतत्वरः – शीघ्र/तत्पर होकर ।

भावार्थ

यदि कोई **मित्र पक्षपात** (दोनों पक्षों से तालमेल) के साथ **उभयात्मक** (द्वैध-निष्ठा वाला) व्यवहार करता है, तो राजा को **शीघ्र (कृतत्वरः)** होकर उसका **उच्छेद** (नाश) करना चाहिए – जैसे **इन्द्र (वज्री)** ने **त्रिशिरा** (तीन-सिर वाले राक्षस) का वध किया था। द्वैध-निष्ठ (Double-agent) मित्र सबसे खतरनाक होता है।

दार्शनिक विवेचन

'उभयात्मकम्' – जो एक ही समय विजिगीषु एवं अरि (शत्रु) – दोनों का मित्र हो, वह 'द्वैध-निष्ठ' (Double agent) है। इन्द्र-त्रिशिरा-प्रसंग – त्रिशिरा एक दैत्य था जो इन्द्र का शत्रु था; उसका वध 'स्वर्ग-रक्षा-हेतु' किया गया था। यह 'दो-मोर्चे-खतरा' (Two-front threat) का निष्कासन है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'डबल-एजेंट' (Double agent)** – जो दो प्रतिस्पर्धी कम्पनियों/देशों के लिए काम करता है, उसे तुरन्त हटा देना चाहिए (जैसे जासूसी-मामलों में)।

श्लोक ७६ (उपचय-हेतु-अमित्र-स्वीकार एवं अहित-मित्र-त्याग)

श्लोक

अमित्रानपि कुर्वीत मित्राण्युपचयावहान् ।
अहिते वर्तमानानि मित्राण्यपि परित्यजेत् ॥७६॥

IAST

Amitrānapi kurvīta mitrāṇyupacayāvahān |
Ahite vartamānāni mitrāṇyapi parityajet ||76||

शब्दार्थ

- अमित्रान् – शत्रु/अमित्रों को
- अपि – भी
- कुर्वीत – (मित्र) बनाए
- मित्राणि – मित्रों को
- उपचयावहान् – उपचय (वृद्धि/लाभ) प्रदान करने वाले
- अहिते – अहित/हानि में
- वर्तमानानि – स्थित/प्रवृत्त
- परित्यजेत् – त्याग दे ।

भावार्थ

राजा को **उपचय (लाभ/वृद्धि)** प्रदान करने वाले **शत्रुओं (अमित्रान्)** को भी **मित्र** बना लेना चाहिए; तथा **अहित (हानि/अनुपकारी)** में स्थित **मित्रों** को भी **त्याग** देना चाहिए। नीति-निर्णय का मापदण्ड 'उपयोगिता' (Utility) है, भावना नहीं।

दार्शनिक विवेचन

यह **'स्वार्थ-प्राधान्य' (Self-interest priority)** का उत्कृष्ट सूत्र है – 'अमित्र' (शत्रु) भी यदि 'उपचय' (विकास/लाभ) दे सकता है, तो उसे मित्र बनाना चाहिए (जैसे राम ने विभीषण को)। इसके विपरीत, 'मित्र' भी यदि 'अहित' (हानि) कर रहा है, तो उसे त्यागना चाहिए (जैसे भीष्म ने दुर्योधन का साथ दिया, किन्तु यहाँ विजिगीषु के दृष्टिकोण से)। यह 'अर्थशास्त्र' का 'उपयोगितावाद' (Utilitarianism) है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'बिजनेस-अलायंस'** – यदि कोई प्रतिद्वन्द्वी कम्पनी (अमित्र) 'फ्यूजन' (उपचय) लाभ दे रही है, तो उसके साथ समझौता करें (जैसे एयरटेल-वोडाफोन); तथा यदि कोई मौजूदा-भागीदार (मित्र) घाटा/विवाद (अहित) कर रहा है, तो उसे छोड़ दें।

श्लोक ७७ (हित-बन्धु-लक्षण एवं उपकारि-मित्र-परिभाषा)

श्लोक

स बन्धुर्योऽनुबध्नाति हितेष्वत्याहितादरः ।
अनुरक्तं विरक्तं च तन्मित्रमुपकारि यत् ॥७७॥

IAST

Sa bandhur yo'nubadhnāti hiteṣvatyāhitādaraḥ |
Anuraktaṃ viraktaṃ ca tan mitram upakāri yat ||77||

शब्दार्थ

- सः – वही
- बन्धुः – बन्धु/आत्मीय
- यः – जो
- अनुबध्नाति – अनुबद्ध/लगा रहता है
- हितेषु – हितकारी कार्यों में
- अत्याहितादरः – अहित (अनुपयोगी/हानिकर) में अनादर (उपेक्षा) करने वाला
- अनुरक्तम् – अनुरक्त/प्रिय/निष्ठावान
- विरक्तम् – विरक्त/अनिच्छुक/प्रतिकूल
- च – तथा
- उपकारि – उपकारी/सहायक
- यत् – जो (मित्र है) ।

भावार्थ

वही सच्चा बन्धु (आत्मीय) है, जो **हितकारी (हितेषु)** कार्यों में **अनुबद्ध (लगा)** रहता है, तथा **अहित (हानिकर)** कार्यों में **अनादर (त्याग/उपेक्षा)** करता है। तथा **जो मित्र अनुरक्त (प्रिय) एवं विरक्त (अप्रिय)** – दोनों परिस्थितियों में **उपकारी (सहायक)** होता है, वही सच्चा मित्र है।

दार्शनिक विवेचन

'अत्याहितादरः' – अहित (बुराई) से दूर रहने वाला। 'अनुरक्तं विरक्तं च' – सुख-दुःख, मान-अपमान – दोनों स्थितियों में उपकार करने वाला। यह **'स्थितप्रज्ञ-मित्र'** (Equanimous friend) की परिभाषा है – जो वैचारिक-हित में लगा रहे, किन्तु अनैतिक-कार्यों में सम्मिलित न हो।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'ट्रू-फ्रेंड'** – जो करियर/उन्नति (हित) में सहायक हो, किन्तु गलत-काम (अहित) में कभी साथ न दे। तथा सुख (अनुरक्त) एवं दुःख (विरक्त) – दोनों समयों में साथ देने वाला मित्र ही 'उपकारी' है।

श्लोक ७८ (मित्र-विचार-पूर्वक-त्याग एवं अभूतदोष-त्याग-हानि)

श्लोक

मित्रं विचार्य बहुशो ज्ञातदोषं परित्यजेत् ।
त्यजन्नभूतदोषं हि धर्मार्थावुपहन्ति सः ॥७८॥

IAST

Mitraṃ vicārya bahuśo jñātadoṣaṃ parityajet |
Tyajann abhūtadoṣaṃ hi dharmārthāv upahanti saḥ ||78||

शब्दार्थ

- मित्रम् – मित्र
- विचार्य – विचार/परीक्षण करके
- बहुशः – बार-बार
- ज्ञातदोषम् – जिसके दोष ज्ञात हो गए हों
- परित्यजेत् – त्याग दे
- त्यजन् – त्याग करते हुए
- अभूतदोषम् – जो दोष-रहित/अकारण त्याग हो
- धर्मार्थौ – धर्म एवं अर्थ (दोनों)
- उपहन्ति – नष्ट/हानि पहुँचाता है
- सः – वह (राजा) ।

भावार्थ

राजा को **बार-बार विचार (बहुशो विचार्य)** करके, **दोष-युक्त (ज्ञातदोषम्)** मित्र को **त्याग (परित्यजेत्)** देना चाहिए; परन्तु यदि वह **बिना दोष (अभूतदोषम्)** के त्याग करता है, तो वह **धर्म एवं अर्थ** – दोनों को **हानि (उपहन्ति)** पहुँचाता है। कारण-रहित-त्याग अन्याय है।

दार्शनिक विवेचन

'बहुशो विचार्य' – चाणक्य-नीति का 'मन्त्रि-परीक्षा' – तीन वर्ष तक परीक्षण। 'ज्ञातदोषम्' – प्रमाणित-दोष होने पर ही त्याग। 'अभूतदोषम्' – काल्पनिक/अकारण-दोष पर त्याग करना 'धर्म' (न्याय) एवं 'अर्थ' (व्यवहार-हानि) – दोनों को नष्ट करता है, क्योंकि वह एक निष्ठावान-सहयोगी को खो देता है। यह 'दण्ड-विधि-शुद्धता' (Procedural justice) है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'टर्मिनेशन-पॉलिसी'** – किसी कर्मचारी (मित्र) को बिना पूरी-जाँच (अभूतदोष) के निकालना कम्पनी के 'धर्म' (नैतिकता) एवं 'अर्थ' (मुकदमा-जोखिम) को हानि पहुँचाता है। यथोचित-जाँच एवं 'सुधार-अवसर' (Corrective opportunity) देना आधुनिक-HR का मूल-सिद्धान्त है।

श्लोक ७९ (स्वयं-दोष-गुण-अन्वेषण एवं शस्य-दण्ड)

श्लोक

स्वयं दोषगुणान्वेषी भवेत् सर्वत्र सर्वदा ।
स्वयं ज्ञातेषु दोषेषु शस्यं स्याद्दण्डपातनम् ॥७९॥

IAST

Svayaṃ doṣaguṇānveṣī bhavet sarvatra sarvadā |
Svayaṃ jñāteṣu doṣeṣu śasyaṃ syād daṇḍapātanam ||79||

शब्दार्थ

- स्वयम् – स्वयं
- दोषगुणान्वेषी – दोष एवं गुणों का अन्वेषक/खोजकर्ता
- भवेत् – हो
- सर्वत्र – सभी स्थानों पर
- सर्वदा – सदा
- स्वयं ज्ञातेषु – स्वयं द्वारा जाने गए
- दोषेषु – दोषों में
- शस्यम् – शस्य/उचित/प्रशंसनीय
- स्यात् – हो
- दण्डपातनम् – दण्ड-पातन/सजा-देना ।

भावार्थ

राजा को **स्वयं (स्वयम्) सर्वत्र (सभी जगह)** एवं **सर्वदा (सदा) दोष एवं गुणों का अन्वेषक (खोजी)** होना चाहिए। तथा **स्वयं द्वारा जाने-गए (प्रत्यक्ष-प्रमाणित)** दोषों पर **दण्ड-पातन (सजा) शस्य (उचित/प्रशंसनीय)** है – अर्थात् अपनी-आँखों-देखी-बात पर ही कार्यवाही करें।

दार्शनिक विवेचन

'स्वयं दोषगुणान्वेषी' – राजा को 'स्वयं' कर्मचारियों/मित्रों का अवलोकन करना चाहिए, केवल सुनने पर निर्भर न रहे। 'स्वयं ज्ञातेषु' – प्रत्यक्ष-प्रमाण (Direct evidence) ही दण्ड का आधार है – यह 'अर्थशास्त्र'

का 'प्रत्यक्ष-प्रमाण-सिद्धान्त' (Eyewitness principle) है। 'शस्यम्' – स्वयं-जाँच-दण्ड को सज्जन-समाज में प्रशंसा मिलती है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'मैनेजमेंट बाय वॉकिंग अराउंड' (MBWA)** – प्रबंधक को स्वयं फ़ील्ड-विज़िट करके समस्याएँ (दोष) एवं अच्छाई (गुण) जाननी चाहिए; तथा स्वयं-देखी-गलती (जैसे कर्मचारी-अनुपस्थिति) पर ही 'डिसिप्लिनरी-एक्शन' (दण्डपातन) लेना उचित माना जाता है।

श्लोक ८० (अविज्ञा-दोष-क्रोध-निषेध – भुजंग-उपमा)

श्लोक

न ह्यविज्ञाय तत्त्वेन दोषं कुप्येत् कथंचन ।
भुजङ्गमिव मन्यन्ते निर्दोषक्रोधिनं जनाः ॥८०॥

IAST

Na hy avijñāya tattvena doṣaṃ kupyet kathaṃcana |
Bhujaṅgam iva manyante nirdoṣakrodhinaṃ janāḥ ||80||

शब्दार्थ
- न – नहीं
- अविज्ञाय – बिना जाने/परखे
- तत्त्वेन – तत्त्व/यथार्थ रूप से
- दोषम् – दोष को
- कुप्येत् – क्रोध करे
- कथंचन – किसी भी प्रकार
- भुजङ्गम् – सर्प (भुजंग) के
- इव – समान
- मन्यन्ते – मानते/समझते हैं
- निर्दोषक्रोधिनम् – निर्दोष (अकारण) पर क्रोध करने वाले को
- जनाः – लोग ।

भावार्थ
राजा को **तत्त्व (यथार्थ)** से **दोष** जाने बिना **किसी भी प्रकार (कथंचन) क्रोध (कुप्येत्)** नहीं करना चाहिए। क्योंकि **अकारण-क्रोधी (निर्दोषक्रोधिनम्)** व्यक्ति को लोग **सर्प (भुजङ्ग)** के समान मानते हैं – जो बिना कारण डसता है, अतः सब उससे दूर भागते हैं।

दार्शनिक विवेचन

'निर्दोषक्रोधी' – वह जो बिना कारण/सबूत के क्रोध करता है, उसकी प्रतिष्ठा 'सर्प' (भुजंग) जैसी होती है – भयभीत, परन्तु घृणित एवं अविश्वसनीय। यह **'क्रोध-निग्रह' (Anger management)** एवं **'प्रमाण-विधि' (Rule of evidence)** का श्रेष्ठ सूत्र है – बिना प्रमाण-दोष-ज्ञान के क्रोध करना नेतृत्व-हानि है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'लीडरशिप-संचार'** – यदि कोई बॉस बिना पूरी-जाँच के गुस्सा (क्रोध) करता है, तो कर्मचारी उसे 'टॉक्सिक' (सर्प-तुल्य) मानकर टीम-भावना छोड़ देते हैं। 'Fact-check before reacting' – आधुनिक 'इमोशनल इंटेलिजेंस' (EQ) का मूल सूत्र।

श्लोक ८१ (मित्र-अन्तर-ज्ञान – मध्यज्यायःकनीयसाम्)

श्लोक

मित्राणामन्तरं विद्यान्मध्यज्यायःकनीयसाम् ।
मध्यज्यायःकनीयांसि कार्याणि च पृथक् पृथक् ॥८१॥

IAST

Mitrāṇāmantaraṃ vidyān madhyajyāyaḥkanīyasām |
Madhyajyāyaḥkanīyāṃsi kāryāṇi ca pṛthak pṛthak ||81||

शब्दार्थ

- मित्राणाम् – मित्रों का
- अन्तरम् – अन्तर/भेद/अंतरंग-संबंध
- विद्यात् – जाने
- मध्य – मध्यम (श्रेणी)
- ज्यायः – ज्येष्ठ/बड़ा/श्रेष्ठ
- कनीयसाम् – कनिष्ठ/छोटा
- मध्यज्यायःकनीयांसि – मध्यम, ज्येष्ठ, कनिष्ठ – ये तीनों प्रकार
- कार्याणि – कार्य/काम
- पृथक् पृथक् – अलग-अलग ।

भावार्थ

राजा को **मित्रों के अन्तर (भेद/विभेद)** को जानना चाहिए – उनमें **मध्यम (मध्य), ज्येष्ठ (बड़ा/श्रेष्ठ), तथा कनिष्ठ (छोटा)** – तीनों प्रकार होते हैं; तथा उन्हें **पृथक्-पृथक् (अलग-अलग)** कार्य देने चाहिए। योग्यता/पद-क्रम के अनुसार ही कार्य-विभाजन करें।

दार्शनिक विवेचन

'मध्य-ज्यायः-कनीयसाम्' – यह **'वयो-गुण-पद-क्रम'** (Age/Seniority/Merit hierarchy) है – ज्येष्ठ (अनुभवी), मध्यम (कुशल), कनिष्ठ (नौसिखिया)। 'पृथक् पृथक् कार्याणि' – उचित-पात्र को उचित-कार्य (Right person for right job) – यह 'मण्डल-प्रशासन' का सूक्ष्म-विभाजन है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'टीम-मैनेजमेंट'** – वरिष्ठ-कर्मचारी (ज्येष्ठ) को रणनीतिक-कार्य, मध्यम-प्रबंधकों को परिचालन-कार्य, तथा कनिष्ठों (जूनियर) को कार्यान्वयन (Execution) – यह 'पृथक्-पृथक्' कार्य-विभाजन ही सफलता-मूल है।

श्लोक ८२ (मिथ्या-अभियोग-त्याग एवं मित्रभेद-त्याग)

श्लोक

न हि मिथ्याभियुञ्जीत शृणुयाच्चापि तद्विधम् ।
मित्रभेदं च ये कुर्युस्तान् समस्तान् परित्यजेत् ॥८२॥

IAST

Na hi mithyābhiyuñjīta śṛṇuyāccāpi tadvidham |
Mitrabhedaṃ ca ye kuryus tān samastān parityajet ||82||

शब्दार्थ

- न – नहीं
- मिथ्याभियुञ्जीत – मिथ्या-अभियोग (झूठा-आरोप) करे
- शृणुयात् – सुने
- तद्विधम् – उसी-प्रकार (झूठे-आरोपों) को
- मित्रभेदम् – मित्रों में भेद (फूट)
- ये – जो
- कुर्युः – करते हैं
- तान् – उन
- समस्तान् – समस्त
- परित्यजेत् – त्याग दे ।

भावार्थ

राजा को स्वयं **मिथ्या-अभियोग (झूठा-आरोप)** नहीं करना चाहिए, न ही ऐसे (झूठे-आरोपात्मक) वचनों को **सुनना (शृणुयात्)** चाहिए। तथा जो **मित्रों में भेद (फूट)** डालने का कार्य करते हैं, **उन सभी**

(समस्तान्) को **त्याग (परित्यजेत्)** देना चाहिए। चुगलखोरी (चरित्र-हनन) एवं फूट-डालना राज्य-विध्वंसक है।

दार्शनिक विवेचन

'मिथ्याभियोग' – अर्थशास्त्र का 'कूट-साक्ष्य' (False evidence) – राजा को स्वयं न करे, न सुने। 'मित्रभेदम्' – 'भेद' (Divide) नीति केवल शत्रु पर, मित्रों पर कदापि नहीं। जो मित्रों में फूट डालें, वे 'पैशुन्य' (चुगलखोर) हैं – उन्हें समूचा त्याग देना चाहिए। यह 'सच्चा-संवाद' (Truthful communication) एवं 'सौहार्द-निर्माण' (Harmony building) का सिद्धान्त है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'वर्कप्लेस-पॉलिटिक्स'** – जो कर्मचारी **'गॉसिप' (मिथ्या-अभियोग)** फैलाते हैं या **'टीम-भेद' (मित्रभेद)** करते हैं, उन सबको **'ज़ीरो-टॉलरेंस'** से हटाना चाहिए – क्योंकि एक 'टॉक्सिक-कर्मचारी' पूरी टीम-संस्कृति को नष्ट कर देता है।

श्लोक ८३ (वचन-षट्-प्रकार – स्वरूप-ज्ञान)

श्लोक

प्रायोगिकं मात्सरिकं माध्यस्थं पाक्षपातिकम् ।
सोपन्यासं च जानीयाद्वचः सानुशयं तथा ॥८३॥

IAST

Prāyogikaṃ mātsarikaṃ mādhyasthaṃ pākṣapātikam |
Sopanyāsaṃ ca jānīyād vacaḥ sānuśayaṃ tathā ||83||

शब्दार्थ

- प्रायोगिकम् – प्रयोगात्मक/परीक्षण-वाचन (उद्देश्य-परीक्षा हेतु)
- मात्सरिकम् – मात्सर्य (ईर्ष्या) से युक्त वचन
- माध्यस्थम् – माध्यस्थ (तटस्थ/निष्पक्ष) वचन
- पाक्षपातिकम् – पक्षपात (तरफदारी) युक्त वचन
- सोपन्यासम् – उपन्यास (विस्तृत-व्याख्या/सिद्धान्त-सहित) वचन
- जानीयात् – जाने
- वचः – वचन
- सानुशयम् – अनुशय (पश्चात्ताप/खेद) सहित वचन
- तथा – तथा ।

भावार्थ

राजा को **छः प्रकार** के वचनों को जानना चाहिए – **(१) प्रायोगिक (परीक्षण-हेतु), (२) मात्सरिक (ईर्ष्या-युक्त), (३) माध्यस्थ (तटस्थ), (४) पाक्षपातिक (पक्षपाती), (५) सोपन्यास (सिद्धान्त-सहित), तथा (६) सानुशय (पश्चात्ताप-सहित)**। वचन-शैली से वक्ता के मनोभाव एवं छिपे-उद्देश्य को पहचानना आवश्यक है।

दार्शनिक विवेचन

यह **'वाग्विज्ञान' (Speech analysis)** का उत्कृष्ट सूत्र है – 'प्रायोगिक' (परीक्षण – जैसे 'यदि तुम करो तो क्या होगा?'), 'मात्सरिक' (ईर्ष्या – जैसे 'वह तो कुछ नहीं कर सकता'), 'माध्यस्थ' (निष्पक्ष – 'मेरी कोई राय नहीं'), 'पाक्षपातिक' (पक्षपात – 'यह सही है, क्योंकि वह हमारा है'), 'सोपन्यास' (विस्तृत-सिद्धान्त – जैसे शास्त्रार्थ), 'सानुशय' (पश्चात्ताप – 'क्षमा करें, मैंने गलती की')। प्रत्येक के पीछे का 'आशय' (Intention) समझना मन्त्रि-कला है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'नेगोशिएशन-स्किल्स'** एवं **'साइकोलॉजिकल-असेसमेंट'** – वार्ता-कक्ष में प्रतिद्वन्द्वी के वचन को इन ६ श्रेणियों में पहचानना (जैसे 'प्रायोगिक' = परीक्षण-प्रश्न, 'सानुशय' = समझौता-संकेत) – यह कूटनैतिक-बुद्धि (Diplomatic acumen) है।

श्लोक ८४ (प्रकाश-पक्ष-ग्रहण-त्याग एवं अन्योन्य-मत्सर-वारण)

श्लोक

प्रकाशपक्षग्रहणं न कुर्यात्सुहृदां स्वयम् ।
अन्योन्यमत्सरं चैषां स्वयमेवाशु वारयेत् ॥८४॥

IAST

Prakāśapakṣagrahaṇaṃ na kuryāt suhṛdāṃ svayam |
Anyonyamatsaraṃ caiṣāṃ svayamevāśu vārayet ||84||

शब्दार्थ

- प्रकाशपक्षग्रहणम् – स्पष्ट/प्रकट रूप से पक्ष-ग्रहण (किसी एक का साथ देना)
- न कुर्यात् – न करे
- सुहृदाम् – सुहृद्/मित्रों के
- स्वयम् – स्वयं
- अन्योन्यमत्सरम् – परस्पर-ईर्ष्या/द्वेष
- एषाम् – इन (मित्रों) का

• स्वयम् – स्वयं
• आशु – शीघ्र
• वारयेत् – रोके/निवारण करे ।

भावार्थ
राजा को अपने **सुहृद् (मित्रों)** के बीच **प्रकाश (स्पष्ट)** रूप से **किसी एक का पक्ष (ग्रहण)** नहीं करना चाहिए (ताकि दूसरे मित्र उपेक्षित न हों); तथा उनके **परस्पर-मत्सर (ईर्ष्या-द्वेष)** को **स्वयं (स्वयम्) शीघ्र (आशु) रोक (वारयेत्)** देना चाहिए। मित्रों में समानता एवं सौहार्द बनाए रखना राजा का कर्तव्य है।

दार्शनिक विवेचन

'प्रकाशपक्षग्रहणम्' – खुलेआम एक मित्र का पक्ष लेना, दूसरों में ईर्ष्या एवं असंतोष पैदा करता है – यह 'सुहृद्-विरोध' (Friendship-friction) का कारण है। 'अन्योन्यमत्सरम्' – इस परस्पर-ईर्ष्या को स्वयं 'आशु' (तुरन्त) रोकना चाहिए, क्योंकि विलम्ब से गुट-बाजी (Factionalism) बढ़ती है। यह 'तटस्थ-नेतृत्व' (Neutral leadership) का सिद्धान्त है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'टीम-लीडर'** – टीम के सदस्यों (सुहृदाम्) के बीच किसी एक को **'फेवरिट'** न बनाए (प्रकाशपक्ष); तथा उनकी आपसी-प्रतिद्वंद्विता (अन्योन्यमत्सर) को तुरन्त (आशु) सुलझाए – अन्यथा टीम-भावना (Team spirit) नष्ट हो जाती है।

श्लोक ८५ (कार्य-गरीयस्त्व-वश – नीच-दोष-गोपन एवं असद-गुण-कथन)

श्लोक

कार्यस्य हि गरीयस्त्वान्नीचानामपि कालवित् ।
सतोऽपि दोषान् प्रच्छाद्य गुणानप्यसतो वदेत् ॥८५॥

IAST

Kāryasya hi garīyastvān nīcānām api kālavit |
Sato'pi doṣān pracchādya guṇān apy asato vadet ||85||

शब्दार्थ
• कार्यस्य – कार्य/उद्देश्य की
• गरीयस्त्वात् – गरीयस्त्व (महत्ता/भारी-प्राथमिकता) के कारण
• नीचानाम् – नीच/तुच्छ/अधम व्यक्तियों के
• कालवित् – काल-वित् (समय-ज्ञाता/विवेकी)

• सतः – सज्जन/गुणी के
• दोषान् – दोषों को
• प्रच्छाद्य – छिपाकर
• गुणान् – गुणों को
• असतः – अगुणी/दुष्ट के
• वदेत् – कहे ।

भावार्थ

कार्य-गरीयस्त्व (उद्देश्य-महत्ता) के कारण **विवेकी (कालवित्)** राजा को चाहिए कि वह **नीच (तुच्छ/अधीन)** व्यक्तियों के दोषों को छिपाए (यदि वे कार्य-सिद्धि में बाधक न हों), तथा **असत (अगुणी)** व्यक्तियों के गुणों को भी कहे – परन्तु यह सब 'कार्य-सिद्धि' (Mission accomplishment) के लिए हो, न कि स्वार्थ-प्रदर्शन हेतु।

दार्शनिक विवेचन

यह अत्यन्त **'यथार्थवादी' (Realist)** सूत्र है – 'गरीयस्त्वात्' – यदि कोई बड़ा राष्ट्रीय-हित (कार्य) साधना है, तो विवेकी राजा 'नीच' (सामान्य कर्मचारी) की छोटी-चूक को नज़रअंदाज़ (प्रच्छाद्य) कर सकता है, तथा 'असत' (अयोग्य/दुष्ट) व्यक्ति के उपयोगी-गुणों की प्रशंसा (वदेत्) करके उसे काम में लगा सकता है – जैसे कौटिल्य ने चाण्डाल-गुप्तचरों का उपयोग किया। यह **'उपयोगितावादी-नैतिकता' (Utilitarian ethics)** है – साध्य (लक्ष्य) की महत्ता साधन-शुद्धि को गौण करती है (परन्तु पूर्ण-अनैतिकता नहीं)।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'प्रोजेक्ट-मैनेजमेंट'** – किसी बड़े-मिशन (कार्य-गरीयस्त्व) के लिए, प्रबंधक कुछ **'टॉक्सिक-प्रतिभा' (असत)** की प्रशंसा करके उसका कौशल निकाल सकता है, तथा छोटे-कर्मचारियों (नीचानाम्) की तुच्छ-गलतियाँ (जैसे विलम्ब) को नज़रअंदाज़ कर सकता है – यह **'प्रायोगिक-प्रबंधन' (Pragmatic management)** है, किन्तु सतर्कता-पूर्वक, क्योंकि अत्यधिक-गोपन राज्य-क्षति का कारण भी बनता है।

श्लोक ८६ (बहुमित्र-नीति एवं शत्रु-वशीकरण)

श्लोक

प्रायो मित्राणि कुर्वीत सर्वावस्थानि भूपतिः ।
बहुमित्रो हि शक्नोति वशे स्थापयितुं रिपून् ॥८६॥

IAST

Prāyo mitrāṇi kurvīta sarvāvasthāni bhūpatiḥ |
Bahumitro hi śaknoti vaśe sthāpayituṃ ripūn ||86||

शब्दार्थ

• प्रायः – अधिकांश/सर्वप्रथम
• मित्राणि – मित्र/सहायक
• कुर्वीत – करे/बनाए
• सर्वावस्थानि – सभी अवस्थाओं/परिस्थितियों में
• भूपतिः – राजा
• बहुमित्रः – बहु-मित्र (अनेक मित्रों वाला)
• हि – निश्चय ही
• शक्नोति – समर्थ होता है
• वशे – वश/अधीन में
• स्थापयितुम् – स्थापित करने के लिए
• रिपून् – शत्रुओं को ।

भावार्थ

राजा को **सभी अवस्थाओं (सर्वावस्थानि)** में **अधिकाधिक मित्र (प्रायो मित्राणि)** बनाने का प्रयत्न करना चाहिए, क्योंकि **बहु-मित्र (बहुमित्रः)** राजा ही **शत्रुओं (रिपून्)** को **अपने वश (वशे)** में करने में **समर्थ (शक्नोति)** होता है। मित्रों की संख्या ही शक्ति-संतुलन का आधार है।

दार्शनिक विवेचन

यह **'गठबन्धन-शक्ति' (Alliance power)** का सिद्धान्त है – अकेला राजा दुर्बल, मित्र-समूह बलवान। 'सर्वावस्थानि' का तात्पर्य है कि सुख-दुःख, युद्ध-शान्ति – सभी परिस्थितियों में मित्र-वृद्धि आवश्यक है, क्योंकि 'बहुमित्रः' ही संकट-काल में शत्रु-निग्रह कर सकता है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'गठबन्धन-राजनीति' (Alliance politics)** – अमेरिका (बहुमित्र – नाटो, QUAD, AUKUS) ही चीन/रूस (रिपून्) को वैश्विक-मंच पर रोक पाता है; अलग-थलग-देश (जैसे ईरान/उत्तर-कोरिया) कमज़ोर होते हैं।

श्लोक ८७ (संकट-मित्र-श्रेष्ठता – भ्रातृ-पितृ-अतिक्रम)

श्लोक

न तत्र तिष्ठति भ्राता न पितान्योऽपि वा जनः ।
पुंसामापत्प्रतीकारे सन्मित्रं यत्र तिष्ठति ॥८७॥

IAST

Na tatra tiṣṭhati bhrātā na pitānyo'pi vā janaḥ |
Puṃsām āpatpratīkāre sanmitraṃ yatra tiṣṭhati ||87||

शब्दार्थ

- न – नहीं
- तत्र – वहाँ (संकट में)
- तिष्ठति – खड़ा/साथ देता है
- भ्राता – भाई
- पिता – पिता
- अन्यः – अन्य
- जनः – व्यक्ति
- पुंसाम् – मनुष्यों की
- आपत्प्रतीकारे – आपत्ति (संकट) के प्रतीकार (निवारण/सामना) में
- सन्मित्रम् – सज्जन-मित्र
- यत्र – जहाँ
- तिष्ठति – खड़ा/साथ देता है ।

भावार्थ

संकट (आपत्) के समय **न तो भाई (भ्राता), न पिता, न ही कोई अन्य व्यक्ति (अन्यो जनः)** वहाँ **खड़ा (साथ देने)** रहता है; जहाँ (यत्र) **सज्जन-मित्र (सन्मित्रम्)** खड़ा होता है, वही पुरुषों (पुंसाम्) के **संकट-प्रतीकार (आपत्प्रतीकारे)** में वास्तविक सहारा है।

दार्शनिक विवेचन

यह **'आपद्धर्म' (Crisis ethics)** का कटु-यथार्थ है – रक्त-सम्बन्ध (भ्राता/पिता) भी अक्सर स्वार्थ-वश संकट में साथ छोड़ देते हैं; परन्तु **'सन्मित्र'** (गुणवान्/निष्ठावान-मित्र) ही **'आपत्प्रतीकार'** (संकट-निवारण) में अडिग रहता है। यह 'स्वार्थ-त्याग-मित्रता' (Selfless friendship) का परम-लक्षण है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक जीवन में – आर्थिक/चिकित्सा-संकट (आपत्) में सगे-सम्बन्धी (भ्राता/पिता) अक्सर विमुख हो जाते हैं, जबकि **वफादार मित्र/बिजनेस-पार्टनर** (सन्मित्र) ही वास्तविक सहारा बनते हैं (जैसे कोविड-काल में मित्रों द्वारा सहायता)।

श्लोक ८८ (मित्र-द्वारा-शत्रु-निग्रह एवं मण्डल-वृत्त-निर्वचन)

श्लोक

अमित्रान् सर्वतो मित्रैर्निगृह्णीयाद्दृढव्रतैः ।
इति मण्डलवृत्तं तन्मण्डलज्ञाः प्रचक्षते ॥८८॥

IAST

Amitrān sarvato mitrair nigṛhṇīyād dṛḍhavrataiḥ |
Iti maṇḍalavṛttaṃ tan maṇḍalajñāḥ pracakṣate ||88||

शब्दार्थ
• अमित्रान् – शत्रुओं (अमित्रों) को
• सर्वतः – चारों ओर से
• मित्रैः – मित्रों (की सहायता) से
• निगृह्णीयात् – निग्रह/दबा/पराजित करे
• दृढव्रतैः – दृढ-व्रत/स्थिर-संकल्प वाले मित्रों से
• इति – इस प्रकार
• मण्डलवृत्तम् – मण्डल-वृत्त (मण्डल-आचरण/नीति)
• तत् – वह
• मण्डलज्ञाः – मण्डल-ज्ञाता विद्वान्
• प्रचक्षते – कहते हैं ।

भावार्थ
राजा को **दृढ-व्रत (स्थिर-निष्ठा)** वाले **मित्रों (मित्रैः)** के साथ मिलकर **शत्रुओं (अमित्रान्)** को **चारों ओर से (सर्वतः) दबाना/पराजित (निगृह्णीयात्)** करना चाहिए। मण्डल-ज्ञाता विद्वान् इसी को **'मण्डल-वृत्त' (मण्डल-नीति-आचरण)** कहते हैं।

दार्शनिक विवेचन

'दृढव्रतैः' – केवल संख्या (बहुमित्र) नहीं, अपितु **'निष्ठा' (Loyalty)** भी आवश्यक है। 'सर्वतः' – **'चारों-दिशाओं से घेराव' (Encirclement)** करके शत्रु-निग्रह करना ही युद्ध-कला का चरम है। यह 'व्यूह-रचना' (Battle-array) का अर्थशास्त्रीय सूत्र है – शत्रु को 'मित्र-वलय' (Friend's circle) से क्षीण करना।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'कन्टेनमेंट पॉलिसी'** – **'दृढव्रत' (वफादार सहयोगी – जैसे जापान/ऑस्ट्रेलिया)** के साथ मिलकर किसी विरोधी राष्ट्र (अमित्र – जैसे चीन) को **'सर्वतः' (आर्थिक, सैन्य, राजनयिक)** दिशाओं से घेरना (जैसे अमेरिका की इंडो-पैसिफिक-रणनीति) – यही मण्डल-वृत्त है।

श्लोक ८९ (मित्र-उदासीन-रिपु – त्रय-सार-मण्डल)

श्लोक

मित्रोदासीनरिपव एतन्मात्रं तु मण्डलम् ।
सम्यक् साधनमेतेषामिति मण्डलशोधनम् ॥८९॥

IAST

Mitrodāsīnaripava etanmātraṃ tu maṇḍalam |
Samyak sādhanam eteṣām iti maṇḍalaśodhanam ||89||

शब्दार्थ
- मित्र – मित्र (सहायक)
- उदासीन – उदासीन (तटस्थ)
- रिपव – शत्रु
- एतन्मात्रम् – इतना-मात्र (ये तीन ही)
- तु – तो
- मण्डलम् – मण्डल/राज्य-चक्र
- सम्यक् – भलीभाँति
- साधनम् – साधन/प्रबंधन/उपाय
- एतेषाम् – इन (तीनों) का
- इति – इस प्रकार
- मण्डलशोधनम् – मण्डल-शोधन (मण्डल-शुद्धि-व्यवस्था) है ।

भावार्थ
मित्र, उदासीन (तटस्थ), तथा शत्रु (रिपव) – ये **तीन (एतन्मात्रम्)** ही **मण्डल (राज्य-चक्र)** के मूल-

अंग हैं। इन तीनों का **सम्यक् (भली-भाँति) साधन (प्रबंधन/नीति)** करना ही **'मण्डल-शोधन' (मण्डल-शुद्धि)** कहलाता है।

दार्शनिक विवेचन

सम्पूर्ण विस्तार (६, १२, ३६, ७२, १०८, ३२४) को **संक्षेप में तीन** (मित्र, उदासीन, शत्रु) में समेट दिया – यह **'त्रि-सार' (Triple essence)** है – मण्डल-विद्या का सरलतम एवं प्रयोज्य-स्वरूप। इन तीनों का 'सम्यक् साधन' – अर्थात् कूटनीति एवं व्यवहार – ही सम्पूर्ण शासन-विद्या है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'विदेश-नीति-त्रय'** – **Friends (सहयोगी – जैसे EU/अमेरिका), Foes (प्रतिद्वन्द्वी – जैसे चीन/पाकिस्तान), Neutrals (तटस्थ – जैसे दक्षिण-पूर्व-एशियाई देश)** – इन्हीं तीनों को संभालना (सम्यक्-साधन) ही किसी देश (जैसे भारत) की **'मण्डल-शुद्धि'** (समग्र-नियंत्रण) है।

श्लोक ९० (समापन-श्लोक – राजा का आदर्श-फल-पुष्प)

श्लोक

इति स्म राजा नयवर्त्मना व्रजन् समुद्यमी मण्डलशुद्धिमाचरेत् ।
विराजते साधु विशुद्धमण्डलः शरच्छशीव प्रतिरञ्जयन् प्रजाः ॥९०॥

IAST

Iti sma rājā nayavartmanā vrajan samudyamī maṇḍalaśuddhim ācaret |
Virājate sādhu viśuddhamaṇḍalaḥ śaracchaśīva pratirañjayan prajāḥ ||90||

शब्दार्थ

- इति – इस प्रकार
- स्म – (अवधारणार्थ) निश्चय ही
- राजा – राजा
- नयवर्त्मना – नय/नीति-मार्ग पर
- व्रजन् – चलता हुआ
- समुद्यमी – उद्यमी/प्रयत्नशील
- मण्डलशुद्धिम् – मण्डल-शुद्धि (राज्य-व्यवस्था-शोधन)
- आचरेत् – करे
- विराजते – शोभायमान होता है
- साधु – भलीभाँति
- विशुद्धमण्डलः – जिसका मण्डल विशुद्ध/शुद्ध (दोष-रहित) हो

- शरच्छशीव – शरद्-ऋतु के चन्द्रमा (आश्विन-पूर्णिमा) के समान
- प्रतिरञ्जयन् – संरञ्जित/प्रसन्न करता हुआ
- प्रजाः – प्रजा/जनता को ।

भावार्थ

इस प्रकार (इति) नीति-मार्ग (नयवर्त्मना) पर चलने वाला, **उद्यमी (समुद्यमी)** राजा **मण्डल-शुद्धि (समग्र-राज्य-व्यवस्था-शोधन)** करे। जिसका **मण्डल विशुद्ध (दोष-रहित एवं सुसंगठित)** होता है, वह **शरद्-ऋतु के चन्द्रमा (शरच्छशीव)** के समान **शोभायमान (विराजते)** होता है, तथा **प्रजाओं को प्रसन्न (प्रतिरञ्जयन्)** करता है – **यह सम्पूर्ण अष्टम सर्ग एवं 'मण्डल-नीति' का सार-फल एवं अन्तिम-निष्कर्ष है।**

दार्शनिक विवेचन

'शरच्छशीव' – शरद्-ऋतु का चन्द्रमा (आश्विन/कार्तिक पूर्णिमा) अत्यन्त **निर्मल, उज्ज्वल एवं सर्व-प्रिय** होता है, क्योंकि आकाश में बादल (कलंक) नहीं होते। 'विशुद्धमण्डलः' – **आन्तरिक-शुद्धि (व्यवस्था-पारदर्शिता) एवं बाह्य-सम्बन्ध-शुद्धि** का यह संयोजन है। 'प्रतिरञ्जयन्' – राजा का अन्तिम लक्ष्य **'प्रजा-तुष्टि'** ही है। यह समग्र-अष्टम-सर्ग का **नैतिक-निष्कर्ष** है – **सुव्यवस्था, पारदर्शिता एवं जन-कल्याण** ही राज-धर्म है।

आधुनिक संदर्भ

आधुनिक **'सुशासन' (Good Governance)** – नीति-मार्ग (नयवर्त्मना) पर चलने वाला, कठिन-परिश्रमी (समुद्यमी), तथा **प्रशासनिक-पारदर्शिता (विशुद्धमण्डलः)** से युक्त कोई सरकार/राष्ट्र ही **जनता को प्रसन्न (प्रतिरञ्जयन्)** कर सकता है, और अन्तर्राष्ट्रीय-मंच पर **शरद-चन्द्र** के समान आकर्षक, सम्मानित एवं प्रभावशाली बनता है – जैसे स्कैंडिनेवियाई देश या आधुनिक भारत का 'डिजिटल-गवर्नेंस' आदर्श।

निष्कर्ष

प्रस्तुत लेख कामन्दकीय नीतिसार के अष्टम सर्ग **"मण्डलयोनिप्रकरणम्"** का सुव्यवस्थित, शोधपरक एवं समालोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। लेखक ने प्रत्येक श्लोक का मूल पाठ, लिप्यंतरण, शब्दार्थ, भावार्थ तथा विस्तृत विवेचन देकर मण्डल सिद्धान्त की मूल अवधारणाओं को स्पष्ट किया है। साथ ही, प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिन्तन को आधुनिक कूटनीति, नेतृत्व, शासन-प्रणाली तथा अंतरराष्ट्रीय संबंधों के परिप्रेक्ष्य में समझाने का सफल प्रयास किया है।

लेख के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि कामन्दकीय नीतिसार केवल एक प्राचीन नीतिग्रन्थ नहीं, बल्कि राज्य-व्यवस्था, शक्ति-संतुलन, मित्र एवं शत्रु नीति तथा विदेश-नीति का एक व्यावहारिक मार्गदर्शक ग्रन्थ है। इसमें प्रतिपादित मण्डल सिद्धान्त वर्तमान वैश्विक राजनीति, सामरिक नीति तथा अंतरराष्ट्रीय संबंधों

की अनेक अवधारणाओं से साम्य रखता है। लेखक ने इन सिद्धान्तों की आधुनिक संदर्भों में सार्थकता स्थापित कर लेख को समसामयिक एवं उपयोगी बना दिया है।

भाषा की सरलता, विषय की क्रमबद्ध प्रस्तुति, प्रामाणिक व्याख्या तथा शोधपरक दृष्टिकोण इस लेख की प्रमुख विशेषताएँ हैं। यद्यपि तुलनात्मक अध्ययन एवं अन्य नीतिग्रन्थों के संदर्भों को और अधिक विस्तार दिए जा सकते थे, तथापि समग्र रूप से यह लेख भारतीय नीतिशास्त्र, संस्कृत साहित्य, राजनीति विज्ञान तथा भारतीय ज्ञान-परम्परा के विद्यार्थियों एवं शोधार्थियों के लिए अत्यन्त उपयोगी एवं संदर्भनीय अध्ययन सामग्री सिद्ध होता है। इसलिए यह लेख प्राचीन भारतीय राजनीतिक दर्शन की वैज्ञानिकता, व्यावहारिकता एवं समकालीन प्रासंगिकता को प्रभावी रूप से प्रतिपादित करता है।

संदर्भ

1. धामी, आनन्द सिंह. कामन्दकीय नीतिसार – अष्टम सर्गः : मण्डलयोनिप्रकरणम् (प्रस्तुत शोध-लेख)।
2. कामन्दक. कामन्दकीय नीतिसार। (विभिन्न संस्कृत संस्करण)।
3. कौटिल्य. अर्थशास्त्र। सम्पा. आर. पी. कांगले (या अन्य प्रामाणिक संस्करण)।
4. मनु. मनुस्मृति। (प्रामाणिक संस्करण)।
5. महाभारत, शान्तिपर्व। (राजधर्म एवं दण्डनीति सम्बन्धी अध्याय)।
6. अल्तेकर, ए. एस. प्राचीन भारतीय शासन-पद्धति।
7. उपाध्याय, बलदेव. संस्कृत साहित्य का इतिहास।
8. शर्मा, रामशरण. प्राचीन भारत का राजनीतिक विचार।
9. भारतीय नीतिशास्त्र एवं राज्यशास्त्र से सम्बन्धित अन्य शोध-पत्र एवं संदर्भ-ग्रन्थ।

परिशिष्ट (Appendix)

परिशिष्ट-क (Appendix A): मण्डल-संख्या-सारणी (Mandala Numerical Matrix)

यह सारणी अष्टम सर्ग में वर्णित समस्त संख्यात्मक विस्तारों का संकलन है:

क्र.	संख्या	श्लोक सन्दर्भ	विवरण
1	2	३९	द्वे एव प्रकृती (पराशर-मत) – केवल आक्रमणकर्ता एवं आक्रमणग्रस्त

2	3	३१	त्रिक – विजिगीषु, अरि, मध्यम
3	5	३७	पञ्चक – पूर्व-दो, स्वयं, पश्च-दो
4	6	३१	षट्क – त्रिक + प्रत्येक का मित्र
5	8	३४	अष्टक – चार मौला (मूल) राजा + चार मित्र
6	10	३५	दशक – अग्र (पूर्व) एवं पश्च (पश्चिम) का सम्मिलित विस्तार
7	12	२२, ४१	द्वादश – सर्वलोक-प्रतीत, व्यवहार-सिद्ध (सर्वमान्य)
8	14	३०	चतुर्दश – विजिगीषु (७) + अरि (७)
9	18	२६	अष्टादश – १२ मौला + ६ विशेष-पद (अरि, मित्र, उभयारि, सुहृत् आदि)
10	21	३३	एकविंशति – ३ राजा (विजिगीषु, अरि, मध्यम) x ७ प्रकृतियाँ
11	30	३७	त्रिंशत् – ५ राजा x ६ प्रकृतियाँ
12	36	३२	षट्त्रिंशत् – ६ राजा x ६ प्रकृतियाँ
13	54	२८	चतुष्पञ्चाशत् – १८ राजा x ३ (स्व+शत्रु+मित्र)
14	60	३६	षष्टि – १० राजा x ६ प्रकृतियाँ
15	72	२५	द्व्यधिक-सप्तति – १२ राजा + (१२ x ५ प्रकृतियाँ)
16	108	२७	अष्टोत्तरशत – १८ राजा x ६ प्रकृतियाँ
17	324	२९	त्रिशत-चतुर्विंशति – ५४ राजा x ६ प्रकृतियाँ

परिशिष्ट-ख (Appendix B): नीतिपारिभाषिक-शब्दावली (Strategic Glossary)

संस्कृत शब्द	IAST	अर्थ (हिन्दी)	आधुनिक समकक्ष
विजिगीषु	Vijigīṣu	विजय-इच्छुक राजा	Expansionist Power / Aggressor
अरि	Ari	शत्रु (अग्र-शत्रु)	Enemy / Adversary
मित्र	Mitra	सहायक-राज्य / मित्र	Ally

पार्ष्णिग्राह	Pārṣṇigrāha	पिछली एड़ी दबाने वाला शत्रु (पश्च-शत्रु)	Rear-enemy / Two-front threat
आक्रन्द	Ākranda	पीछे स्थित मित्र (संकट-सहायक)	Rear-ally / Strategic backup
आसार / तदासार	Āsāra / Tadāsāra	पार्श्व-सहायक (कंधे/फ्लैंक का सहायक)	Flanking ally
मध्यम	Madhyama	दो शक्तियों के बीच स्थित राज्य	Buffer state / Mediator
उदासीन	Udāsīna	मण्डल के बाहर स्थित अत्यन्त शक्तिशाली राज्य	Superpower / Outsider hegemon
संहत	Saṃhata	संयुक्त/एकत्रित (राज्य-समूह)	United / Allied forces
व्यस्त	Vyasta	अलग-अलग/विभक्त (परस्पर-युद्धरत)	Divided / Disunited
उभयमित्र	Ubhayamitra	दोनों पक्षों (विजिगीषु एवं अरि) का सामान्य-मित्र	Common friend / Neutral mediator
सन्मित्र	Sanmitra	सज्जन/निष्ठावान मित्र	True friend / Trusted ally
आपत्प्रतीकार	Āpatpratīkāra	संकट-निवारण / आपत्ति-सामना	Crisis management
कर्शन	Karśana	शत्रु को दुर्बल-करण (कृश-करण)	Attrition / Weakening
पीडन	Pīḍana	शत्रु पर दबाव/उत्पीड़न	Harassment / Coercion
उच्छेदन	Ucchedana	शत्रु का पूर्ण-नाश/उखाड़-फेंक	Annihilation / Elimination
अपचय	Apacaya	योग्य-पुरुषों/नेतृत्व का नाश (राज्य-विध्वंस नहीं)	Decapitation (of leadership)

परिशिष्ट-ग (Appendix C): युद्ध-व्यूह-आरेख (Strategic Formation for Shlokas 43-50)

यह आरेख श्लोक ४३ से ५० में वर्णित 'अग्र-पश्च-पार्श्व' (Front-Rear-Flank) की सामरिक स्थिति को दर्शाता है:

[अग्र-मोर्चा (Purastāt)]

(शत्रु-मित्र) (अरि - मुख्य शत्रु) (शत्रु-मित्र)

अरेर्मित्रम् ----------------- अरिः ----------------- अरेर्मित्रम्

|

| (विजिगीषु एवं मित्रों का आक्रमण)

|

(मित्र-मित्र) ---- (विजिगीषु - स्वयं) ---- (मित्र-मित्र)

मित्रमित्रम् ----------------- मित्रम् ----------------- मित्रमित्रम्

[मध्य-क्षेत्र (Madhya)]

[पश्च-मोर्चा (Pṛṣṭhataḥ)] [पार्श्व-मोर्चा (Pārśva)]

(पश्च-शत्रु) (पश्च-मित्र) (पार्श्व-मित्र)

पार्ष्णिग्राहः <--- आक्रन्दः (सहायता) --- आसारः (फ्लैंक)

रणनीति:

1. विजिगीषु + आक्रन्द (पश्च-मित्र) मिलकर पार्ष्णिग्राह (पश्च-शत्रु) को दबाएँ (श्लोक ४६)।

2. विजिगीषु + मित्र + समित्र (उभयमित्र) मिलकर अरि (अग्र-शत्रु) एवं उसके मित्र (रिपुमित्र) को घेरें (श्लोक ४७-४८)।

3. आसार (पार्श्व-मित्र) को पार्श्व-आक्रमण हेतु तैनात करें, जिससे शत्रु 'उभयतः' (दोनों ओर से) पीड़ित हो (श्लोक ५०)।
